पावेल क्लुशांत्सेव
आओ, दूरबीन देखें

पावेल क्लुशांत्सेव

आओ, दूरबीन देखें

अनुवादक: योगेन्द्र नागपाल

चित्र: ये० वोइशविलो, व० कलाऊशिन,
व० स्तारोदूबत्सेव

आवरण, मुक्त और मुख पृष्ठ: यू० किसेल्योव

П. Клушанцев

О ЧЕМ РАССКАЗАЛ ТЕЛЕСКОП

На хинди

P. Klushantsev

ALL ABOUT THE TELESCOPE

In Hindi

सोवियत संघ में प्रकाशित

ISBN 5-05-000981-2

बौना घोड़ा
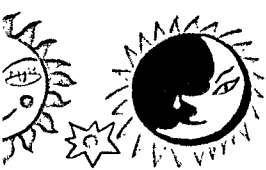
जिस पर हम रहते है, अत्यधिक बड़ा है। शायद इसका छोर बहुत दूर कहीं, ऊंचे पहाड़ों, जंगलों, समुद्रों के पार है और बौने घोड़े पर सवार होकर ही वहां पहुंचा जा सकता है।

उधर लोगों के मन का कौतूहल भी शांत नहीं हो रहा था। वे सोचते थे—हर थाल किसी न किसी चीज पर टिका होता है। आखिर थाल यों अपने आप ही हवा में तो नहीं लटका हो सकता। यह तो हमी की बात लगती है। सो पृथ्वी भी किसी चीज पर टिकी हुई है। लेकिन कैसी है उसकी टेक? यह किसी तरह पता ही न चलता था।

ऊपर से भूचाल भी आते थे। तब पृथ्वी डोलने लगती थी, पहाड़ चटखने और ढह जाते थे, समुद्र में भीमकाय लहरें उठती थी। लोगों की दशा वैसी होती थी, जैसी रजाई पर बिनौलों की होगी, यदि तुम रजाई तले अचानक करवट बदल लो।

सो, लोगो ने सोचा कि पृथ्वी किन्ही शक्तिशाली जीवो की पीठ पर टिकी हुई है। जब तक ये जीव सोते रहते है तब तक सब ठीक रहता है, लेकिन जैसे ही वे जागकर हिलने-डुलने लगते हैं, वैसे ही भूचाल आने लगता है।

अब लोगो ने तय किया कि पृथ्वी तीन विराट ह्वेलो पर टिकी हुई है। ह्वेल से बडा जीव तो ससार मे और कोई है ही नही।

लेकिन यदि पृथ्वी ह्वेलो पर टिकी हुई है, तो ह्वेल किस पर टिके हुए हैं?

ह्वेले समुद्र मे तैरती हैं, लोग अपने ही सवाल का जवाब देते थे। ह्वेले तो सदा तैरती ही रहती हैं न।

तो फिर समुद्र कहा फैला हुआ है?

पृथ्वी पर।

और पृथ्वी ह्वेलो पर?

कुछ बात बनती नही थी।

सो लोग कहने लगे, "पृथ्वी तीन ह्वेलो पर टिकी हुई है। बस, बात खत्म। अगर तुम्हे इतने पर सतोष नही होता तो जाओ खुद जाकर देख लो।"

अब तो ये कहानियां हमे हास्यास्पद लगती हैं, लेकिन तब लोग इन बातों मे विश्वास करते थे। किसी को कुछ पता जो नही था। और किसी से वे पूछ भी नहीं सकते थे।

प्राचीन युग मे लोग पृथ्वी पर बहुत दूर तक तो जा नही सकते थे। तब न सडकें थी, न मोटरगाडिया, न जहाज, रेलगाड़ियो और हवाई जहाजो की तो बात

ी छोड़ो। इसलिए ह्वेलो की बात परखने के लिए "पृथ्वी के छोर" तक कोई नही पहुच पाता था।

फिर भी धीरे-धीरे लोग यात्राएं करने ही लगे। ऊटो पर बैठकर वे दूर ही दूर जाने लगे, बडी-बडी नावो मे नदियो और समुद्रो मे जाने लगे।

अब रास्ते से भटक न जाये इसके लिए लोग अपने पावो तले नही, आसमान को देखने लगे। समुद्र मे जहा चारों ओर पानी के अलावा और कुछ नही होता, रास्ता और कैसे ढूंढा जा सकता है? या फिर रेगिस्तान मे? वहा भी चारो ओर बस रेत ही रेत होती है। सूर्य, चद्रमा और तारे तो सभी जगह नजर आते हैं–समुद्र मे भी और रेगिस्तान मे भी। उन्हे जगल मे भी देखा जा सकता है और पहाडो के बीच गहरे खड्डो के तले मे भी। और वे सदा अपने स्थान पर ही होते हैं।

सूर्य, चद्रमा और तारे आकाश पर सदा एक ही तरह से चलते हैं। ऐसा तो कभी नही होता कि सूर्य उलटी दिशा मे, पश्चिम से पूर्व को चलने लगे, या फिर चद्रमा उगे और आसमान पर एक ही जगह खडा हो जाये; या तारे अपनी जगह से हटकर कही और चले जाये। दिन प्रति दिन, वर्ष प्रति वर्ष सूर्य, चद्रमा और तारे आकाश पर एक ही गति से चलते रहते है, जैसे कि घड़ी की सुइया।

पृथ्वी पर चाहे कुछ भी हो–बारिश आये, आधी आये, तूफान आये–सूर्य, चद्रमा और तारे आकाश पर एकसमान गति से चलते रहते हैं।

तब लोगो ने सोचा कि हो न हो आकाश के पीछे कोई बहुत जटिल यत्र छिपा हुआ है। शायद, यह यत्र घडी जैसा है। वहा पहाड जितने बडे दातेदार चक्के घूमते होगे और वे पृथ्वी के ऊपर तारो भरे इस आकाश को घुमाते होगे। आकाश भी तो बहुत भारी होगा–इतना बडा जो है!

कितना अच्छा हो अगर पृथ्वी के छोर तक पहुचकर आकाश मे छेद कर लिया जाये और देखा जाये उसके पार क्या है! कितना रोचक होगा वहा सब कुछ!

हसो नही। कभी लोगो को सचमुच आकाश के उस पार के इन विराट "चक्को" मे विश्वास था।

खैर, जो भी हो, लोग इस बात के आदी हो गये कि आकाश पर सदा अटल व्यवस्था रहती है, कि खगोलीय पिडो का भरोसा किया जा सकता है, वे कभी दगा नही देगे। इससे लोगो को दूर-दूर की यात्राए करने मे मदद मिलती थी।

उदाहरण के लिए रोजाना डूबने सूरज की दिशा मे बढते हुए पथिक जानते थे कि वे एक ही दिशा मे जा रहे हैं और बेशक, कभी भटकते नही थे।

यह मत भूलो कि तब न कुतुबनुमा (कम्पास) था, न मानचित्र, न प्रकाश-स्तम्भ।

तो इस तरह तारो को देख-देखकर यात्रा करते हुए लोगो का ध्यान एक विचित्र बात की ओर गया।

ऐसा होता कि लोग अपने गाव से ऊटो पर सवार होकर लबी यात्रा पर निकले और उन्होंने किसी चमकते तारे को अपना पथ-प्रदर्शक मान लिया।

अब वे चलते जाते है, चलते जाते है–एक दिन, दो दिन, हफ्ता भर और देखते क्या है कि हर अगली रात को वह तारा क्षितिज से अधिक ऊपर दिखायी देता है। जैसे कि पथिक सपाट मैदान पर नही चल रहे बल्कि विशाल ढलवा टीले पर चढ रहे है और उन्हे टीले के पार अधिक ही अधिक दूर का दृश्य दिखायी दे रहा है। जब वे घर लौटते है तो तारा हर रात को पहले से नीचे नजर आता है, मानो वे उससे दूर टीले के पीछे जा रहे हैं।

सो, लोगो ने सोचा–इस सबका मतलब है कि पृथ्वी उभारदार है, औंधे रखे किसी विशाल कडाहे की भाति।

मजे की बात तो यह है कि समुद्र मे जल भी उभारदार निकला। नौयात्रियो ने ही नही, बल्कि सागर तट पर रहनेवाले लोगों ने भी यह बात देखी। वे समुद्र
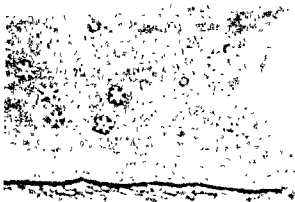
र आने जहाज को देखने पहले तो सारा का सारा जहाज
ज़र आता, फिर उसके केवल पाल ही और फिर मस्तूलों
े ऊपरी सिरे ही और अन्त पूरा जहाज ओझल हो
ाता। जैसे कि उसने कोई पहाड़ पार किया हो और
उस पार की ढलान पर उतर गया हो।

तुम स्वयं भी समुद्र या झील के तट पर यह बात
ख सकते हो। हां, पानी में ऊंची लहरें नहीं उठ रही
होनी चाहिए और पानी के पास झुककर जहाज को
खना चाहिए।

जहाज जब पांचेक किलोमीटर दूर चला जायेगा
ो उसका निचला हिस्सा पानी के पीछे छिपने लगेगा।
सियों किलोमीटर दूर निकल जाने पर ही जहाज पूरी
रह ओझल होगा। इसलिए दूरबीन से देखने पर ही
तुम्हें यह सब अच्छी तरह नज़र आयेगा।

प्राचीन युग में लोगों के लिए इस विचार का आदी
होना बहुत कठिन था कि समुद्र उभारदार है। वे तो
दा से यही देखते आये थे कि पानी जब भी बिखरता
है तो एकसमान, सपाट फैलता है।

लेकिन इस बात पर उन्हें विश्वास करना ही पड़ा।
ो अब लोग यह मानने लगे कि पृथ्वी सपाट थाल नहीं,
बल्कि गोलार्ध है, जिस पर पता नहीं कैसे समुद्र "पोत"
दिये गये हैं।

परन्तु गोलार्ध के भी सिरे होने चाहिए। लोगों
ने समुद्रों की यात्राएं कीं, दूर-दूर के देशों को गये,
लेकिन "पृथ्वी के छोर" की कोई कहीं दूर से भी झलक
तक न पा सका।

एक और बात थी जिस पर लोगों को बहुत दिमाग
लड़ाना पड़ रहा था। सूर्य, चन्द्रमा और तारे तो रोजाना
कहीं डूब जाते हैं, पृथ्वी के छोर के पीछे डुबकी लगाते
हैं और अगले दिन दूसरी ओर से निकल आते हैं। तो
भी ऐसा कभी नहीं हुआ कि वे उन स्तम्भों में फंस गये
हों, *जिन पर पृथ्वी टिकी हुई है। तारे भी सदा सभी*
अपने स्थान पर होते हैं। सूर्य और चन्द्रमा को भी कभी
पूरब में उगने में देरी नहीं होती।

लगता है कि पृथ्वी के तले, जहां से *खगोलीय*
पिंड गुज़रते हैं, कुछ नहीं है।

अब लोगों ने सोचा: यह भी तो हो सकता है कि
कोई स्तम्भ-वस्तम्भ हो ही न? और पृथ्वी *गोलार्द्ध*
नहीं गोला है? यह गोला किसी पर भी टिका नहीं हुआ
है, बल्कि किसी जादुई बल से लटका हुआ है?

अगर ऐसा मान लिया जाये, तो सभी पहेलियां
आसानी से बूझी जा सकती हैं—पृथ्वी का छोर क्यों
नहीं है और सूर्य क्यों कहीं फंसे बिना रात को पृथ्वी
के नीचे से गुज़र जाता है।

बस एक ही बात समझ मे नही आती थी—पृथ्वी के दूसरी ओर लोग कैसे चलते हैं? वहा तो उनका सिर नीचे और पैर ऊपर होते होगे!

सैकडो साल बीतने पर ही लोग ऐसे बड़े-बड़े जहाज बनाना सीख पाये, जिन पर महासागर पार किये जा सकते थे। अब लोगों ने सारी पृथ्वी का चक्कर लगाया तो उन्हे पूरी तरह यकीन हो गया कि पृथ्वी एक गोला है। और वे यह भी समझ गये कि पृथ्वी पर कोई भी सिर नीचे पाव ऊपर करके नही चलता है। क्योंकि पृथ्वी ही सदा नीचे होती है।

अब तो हम सब बचपन से ही जानते हैं कि पृथ्वी एक गोला है। हर स्कूल मे अब ग्लोब है। लेकिन जरा सोचो कि पहले लोगों के लिए इस निष्कर्ष पर पहुंचना कितना कठिन था!
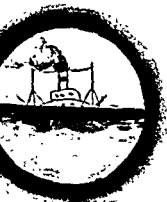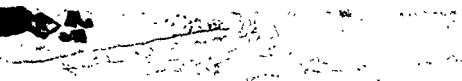
तारे इतने सुंदर क्यों हैं ?

चलो, किसी शाम को जब मौसम साफ हो और अंधेरा घिर आये तो दूर मैदान में या समुद्र के तट पर, किसी ऐसी खुली जगह पर चलें, जहां आकाश न मकानो से, न पेडो से छिपा हो, ऐसी जगह जहा आस-पास सडकों की रोशनिया न जलती हों और मकानों मे बत्तिया। चारों ओर बसा घना अंधेरा हो।

अब आकाश को देखो! कितने तारे हैं वहा! सभी ऐसे नुकीले-नुकीले लगते हैं, जैसे कि अंधेरे गुम्बद मे सूई से महीन-महीन छेद कर दिये गये हो और उनके पीछे नीली रोशनी हो।

देखो, कैसे अलग-अलग हैं तारे। इनमें बडे भी है और छोटे भी, नीले भी और पीले भी, कुछ तारे अकेले हैं और कुछ एक दूसरे से सटे-सटे हैं, झुडों मे जमा हैं।

इन "झुडो" को, तारा-पुजो को ही नक्षत्र कहते है।

जैसे आज हम तारों भरे आकाश को देख रहे हैं, वैसे ही हजारों साल पहले लोग उसे देखा करते थे।

आकाश तब लोगो के लिए कम्पास, घड़ी, कैलेंडर सभी कुछ था। तारो की मदद से ही पथिक अपना पथ ढूढते थे। तारों को देखकर ही लोग यह पता लगाते थे कि सुबह होने मे कितनी देर है, और तारों से ही वे यह पूछते थे कि वसत कब आयेगा।

आकाश की लोगो को सदा ही और हर बात मे आवश्यकता थी। लोग देर तक मत्रमुग्ध-से उसे देखते रहते थे, निहारते और चकित होते रहते थे और उनके मस्तिष्क मे भाति-भाति के विचार जन्म लेते रहते थे।

तारे क्या हैं? वे आकाश पर कैसे प्रकट हुए? वे आकाश पर इस तरह ही क्यों छिटके हुए हैं, किसी और तरह क्यो नही? ये नक्षत्र क्या हैं?

रात को शांति होती है: हवा धीमी पड़ जाती है, पेड़ो की पत्तिया नहीं खडखडाती हैं, सागर शात हो जाता है। पशु-पक्षी सो जाते हैं। लोग सो जाते हैं। और इस खामोशी मे तारो को देखते हुए मन मे अपने आप ही भाति-भाति की कथाए जन्म लेती हैं—एक से एक सुंदर।

प्राचीन युग मे लोगों ने तारों के बारे में बहुत सी कथाए सोचीं।

वहा सात चमकते तारे देख रहे हो न? हमने उनका

त्र बनाया है। लगता है जैसे आकाश पर बिंदुओं से तीला बना हो, लंबी मूठवाला पतीला।

चीन मे पुराने जमाने मे इस नक्षत्र को "पे-तेऊ" कहा जाता था जिसका अर्थ है पतीला। भारत में इसका नाम सप्तर्षि रखा गया। मध्य एशिया मे जहा घोड़े बहुत थे इस नक्षत्र के बारे में कहा जाता था "खूंटे से बधा घोड़ा"। यूरोप मे इस नक्षत्र का नाम ऋक्षिका (रीछनी) पड़ा।

प्राचीन यूनान मे इस नक्षत्र के बारे मे यह कहानी गढ़ी गयी।

एक जमाने में अरकादिया नामक देश का राजा था लाओकून। उसके एक बेटी थी कलिस्तो। ससार भर मे उसकी जैसी रूपवती युवती और कोई नहीं थी। रूप की देवी हेरा का सौंदर्य भी उसके सामने फीका पड़ गया। इस पर हेरा आग-बबूला हो उठी। उसने रूपवती कलिस्तो को कुरूप रीछनी बनाने की ठानी। हेरा का पति देवराज ज़ेउस निरीह युवती को इस शाप से बचाना चाहता था, लेकिन उसके पहुचने तक देर हो चुकी थी। कलिस्तो वहा नही थी, उसके स्थान पर झबरीला, कुरूप जानवर सिर झुकाये घूम रहा था।

ज़ेउस को सुदरी पर तरस आया। रीछनी की पूछ पकड़कर वह उसे स्वर्गलोक को खींच ले चला।

बड़ी देर तक वह पूरा ज़ोर लगाकर उसे खींचता रहा। इसीलिए रीछनी की पूछ इतनी लबी हो गयी। आकाश पर ले जाकर ज़ेउस ने लबी पूछवाली कुरूप रीछनी को चमकीला नक्षत्र बना दिया। तब से लोग रोज़ रात को इस नक्षत्र को निहारते हैं और रूपवती कलिस्तो को याद करते हैं।

ऋक्षिका से थोड़ी ही दूर ध्रुव तारा चमकता है। उसे ढूंढना कठिन नहीं है। ऋक्षिका के दो सिरो के तारो से होकर खींची गयी एक रेखा की कल्पना करो, जैसे कि हमने यहां चित्र मे खींची है। अब इस रेखा पर ऋक्षिका के तारो के बीच की दूरी जितने बड़े पाच कदम नापो और तुम ध्रुव तारे पर पहुच जाओगे। वह इतना चमकीला

है। लेकिन इसे जानना चाहिए। यह उत्तर दिशा
रता है।

काश के दूसरी ओर छोटे-छोटे तारों का पुंज
तारों को प्लायोडिज कहते हैं। सहमे-सहमे मासूम
तरह ये एक दूसरे से सटे हुए हैं। कुल छह
ये।

ायोडिज, ध्रुव तारे और कृत्तिका के बारे में
माने में लोगों ने यह कहानी बनायी थी।

क जमाने में सात दस्यु-भाई रहते थे। उन्होंने
बहुत दूर, पृथ्वी के छोर पर सात बहनें रहती
और सुशील बहनें। भाइयों ने उन्हें अपनी पत्नियां
ो ठानी। घोड़ों पर सवार होकर वे दौड़ चले
और आखिर पृथ्वी के छोर पर पहुंच गये। वहां वे छिपकर बैठ गये। शाम को जब सात बहनें घूमने निकलीं तो वे उनकी ओर लपके। एक को तो उन्होंने पकड़ लिया, लेकिन बाकी बहनें तितर-बितर हो गयीं।

दस्यु-भाई इस युवती को हर ले गये, लेकिन इसका उन्हें कठोर दंड मिला। देवताओं ने उन्हें तारे बना दिया—वही, जिन्हें हम कृत्तिका नक्षत्र कहते हैं और उन्हें ध्रुव तारे का प्रहरी बना दिया।

जब रात अंधेरी हो और आसमान साफ, तो कृत्तिका की पूंछ के बिचले तारे के पास एक बिल्कुल छोटा-सा तारा नज़र आता है। यह हर ली गयी युवती है।

प्लायोडिज शेष छह बहनें हैं। सहमी-सहमी-सी वे एक दूसरी से सटी रहती हैं और रोज़ रात को डरती-डरती आकाश पर चढ़ती हैं, अपनी बहन को ढूंढ़ती हैं।

आकाश के दूसरी ओर कुछ तारे अर्धवृत्त में बिखरे हुए हैं, जैसे कि आधा मुकुट जगमगा रहा हो। यह उत्तरी किरीट नक्षत्र है।

प्राचीन यूनान में कहा जाता था कि कभी क्रीट द्वीप पर अरियाद्ना नाम की साहसी, सुंदर राजकुमारी रहती थी। उसे पराक्रमी सेनानी थीसियस से प्रेम हो गया और वह पिता के क्रोध की परवाह किये बिना उसके साथ चली गयी। लेकिन रास्ते में थीसियस ने एक सपना देखा। उसे यह सपना आया कि देवता उसे अरियाद्ना को त्याग देने का आदेश दे रहे हैं। थीसियस देवताओं

सीफियस
एंड्रोमिडा
ध्रुव तारा
कैसियोपिया
पर्सियस
प्लायोडिज
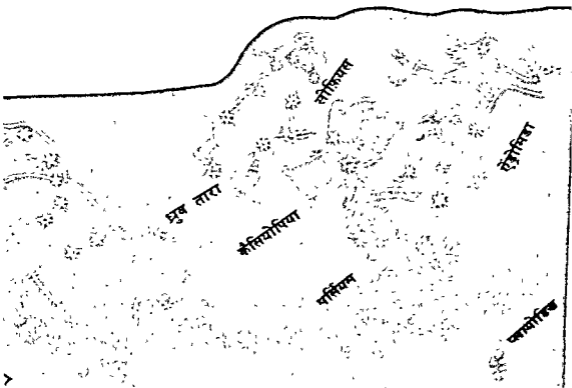
के आदेश की अवहेलना करने का साहस न कर पाया। विलाप करती अरियाद्ना को सागर तट पर छोड़कर वह उदास मन से आगे चल दिया।

बैकस देवता ने अरियाद्ना का विलाप सुना और उससे विवाह करके उसे देवी बना लिया। अरियाद्ना के रूप को शाश्वत बनाने के लिए उसने उसके सिर से फूलों का मुकुट उतारकर उसे आकाश पर फेंक दिया।

मुकुट के फूल उड़ते-उड़ते रत्न बन गये और आकाश पर पहुंचकर तारों की भांति चमकने लगे।

तारों का यह मुकुट (किरीट) देखकर लोग रूपवती अरियाद्ना को याद करते हैं।

इधर एक और नक्षत्र है। पुस्तक मे बना चित्र देखो – पांच तारे "M" अक्षर जैसे हैं, जिसकी "टांगें" अलग-अलग दिशाओं में फैल गयी हैं। प्राचीन लोगों को यह नक्षत्र कुर्सी पर लेटी युवती की याद दिलाता था। इस नक्षत्र का नाम है कैसियोपिया। कैसियोपिया नक्षत्र के इर्द-गिर्द तीन और नक्षत्र हैं. सीफियस, ऐंड्रोमिडा और पर्सियस।

इन चार नक्षत्रों की बड़ी लंबी कहानी प्राचीन यूनान मे गढ़ी गयी थी।

बहुत पहले इथियोपिया देश का राजा था सीफियस। उसकी पत्नी कैसियोपिया को अपने रूप पर बहुत गर्व था। एक बार वह जल-परियों नीरियस-पुत्रियों के सामने अपने सौंदर्य की प्रशंसा करने लगी। नीरियस-पुत्रियों को यह बहुत बुरा लगा, उन्होंने जल देवता पोसिडोन से शिकायत की। क्रुद्ध पोसिडोन ने विराट, डरावनी ह्वेल इथियोपिया की ओर भेजी।

अब सीफियस को चिंता हुई कि ह्वेल को शांत कैसे किया जाये ताकि वह उसके देश को सताये नहीं।

मनीषियों ने सीफियस को परामर्श दिया कि वह देश की सबसे सुंदर युवती, अपनी चहेती बेटी ऐंड्रोमिडा को ह्वेल को भेंट कर दे।

सीफियस रो पड़ा। लेकिन क्या करता? किसी भी कीमत पर उसे भयानक ह्वेल से देश की रक्षा करनी थी। सो उसने बेटी का बलिदान करने का निश्चय किया।

ऐंड्रोमिडा को सागर तट पर लाकर जंजीरों से चट्टान से बांध दिया गया। ह्वेल आयेगी, उसे ले जायेगी।

उधर इथियोपिया से दूर वीर योद्धा पर्सियस एक अद्वितीय पराक्रम करने निकला था। वह चुपके-चुपके एक वीरान द्वीप पर पहुंचा, जहां गोर्गनें रहती थीं। ये ऐसी राक्षसियां थीं, जिनके सिरों पर बालों की जगह काले सांप थे। जिसकी भी नजर इनसे मिल जाती वह
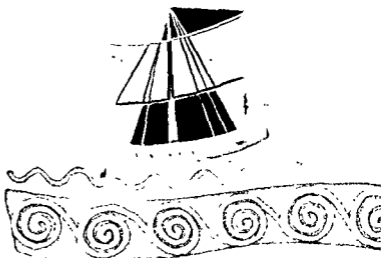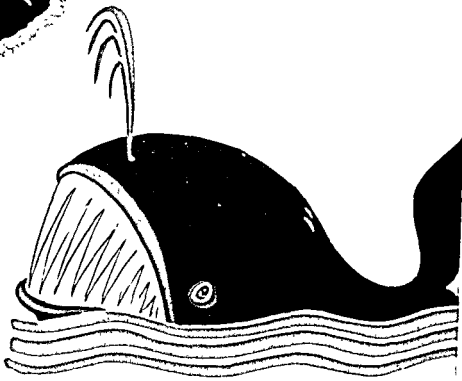
भय से जकड़ा जाता और वही का वही पत्थर बन जाता।

पर्सियस इन गोर्गनों के पास उस समय पहुचा जब वे सो रही थी। उसने मेडूसा नाम की सबसे बड़ी गोर्गन राक्षसी का सिर काट लिया।

मेडूसा का भयावह सिर अपने झोले में छिपाकर वह उडन-चप्पलो पर अपने देश को लौट चला।

इथियोपिया के ऊपर से गुजरते हुए पर्सियस ने चट्टान से बधी, आसू बहाती सुदरी ऐंड्रोमिडा को देखा।

उधर भयानक ह्वेल भी तट के पास पहुच रही थी – ऐंड्रोमिडा की बलि लेने।

पर्सियस चील की भांति ह्वेल पर झपटा। बड़ी देर तक वह ह्वेल से जूझता रहा, अन्त में उसने मेडूसा का भयानक सिर ह्वेल को दिखा दिया और वह शक्तिशाली विराट जीव डर के मारे बुत बन गया।

ह्वेल इथियोपिया के तट के पास एक टापू बन गयी। पर्सियस अपनी ऐंड्रोमिडा की जंजीरें खोलकर उसे उसके पिता के पास ले गया।

राजा सीफियस की खुशी का ठिकाना न रहा और

उसने वीर पर्सियस से अपनी पुत्री ऐंड्रोमिडा का विवाह कर दिया।

आकाश मे अनेक नक्षत्र हैं और उनके बारे मे कहानिया भी अनेक हैं। उधर तारो से एक पक्षी बना हुआ है। यह हस नक्षत्र है। कहा जाता था कि देवराज जेउस ही हंस बनकर पृथ्वी पर आ रहे हैं।

उधर एक और सुदर नक्षत्र है ओरियन। इसका भारतीय नाम है मृग। यूनानी कथाओ के अनुसार ओरियन

हंस

निडर आखेटक है। वह गदा उठाकर किसी विराट पशु को मारने जा रहा है।

आकाश के दूसरी ओर वृश्चिक (बिच्छू) नक्षत्र छिपा हुआ है। इन तारो को देखकर लगता है कि इस दुष्ट कीट के अग अधेरे मे झिलमिला रहे हैं।

तारो भरा आकाश कथा-कहानियों की पूरी पुस्तक ही है। सभी तो हम सुना नही सकते।

अच्छा, कहानिया तो कहानिया ही है। हमे यह भी तो पता चलाना चाहिए कि तारे हैं क्या।

लोगो ने सदियो, सहस्राब्दियो तक इस पर बहुत सोचा-विचारा।

कुछ लोगो का कहना था कि तारे छत मे छोटे-छोटे छेद है, जिनसे प्रकाश छनकर आता है।

कुछ लोग यह मानते थे कि तारे आकाश मे ठुकी सोने-चांदी की कीलो की टोपिया है।

सभी लोग इस बात पर एकमत थे कि आकाश ठोस छत है, ठोस गुम्बद है। क्योंकि तारे कभी अपनी जगह से नही हटते। दिन, महीने, वर्ष बीतते है, लेकिन

वृश्चिक

तारो का हर पुज, हर नक्षत्र जरा भी नही बदलता। सो, लोगो को यह लगता था कि वे वही लगे हुए है, जैसे दीवार पर कीले।

अगर तारे रोयो की तरह हवा मे "उडते" होते, तो वे अपनी जगह पर कतई न बने रह पाते। तब नक्षत्र भी अपना रूप बदलते रहते। चूकि नक्षत्र एक ही जगह "ठुके" रहते हैं, इसका मतलब है आकाश ठोस है। अब यदि आकाश ठोस है तो उडकर उस तक पहुचा जा सकता है, उसे हाथ से छुआ जा सकता है।

लेकिन लोगो को उडना तो आता नही था, इसलिए बहुत समय तक वे यह नही पता लगा सके कि यह छत कितनी ऊचाई पर है और कैसी है। पत्थर जैसी मजबूत और मोटी है? बिल्लौरी काच जैसी नाजुक-पतली है? दिन मे वह नीली और रात को काली क्यो होती है?

मृग

मय मे जकडा जाता और वही का वही पत्थर बन जाता।

पर्सियस इन गोर्गनों के पास उस समय पहुचा जब वे सो रही थी। उसने मेडूसा नाम की सबसे बड़ी गोर्गन राक्षसी का सिर काट लिया।

मेडूसा का भयावह सिर अपने झोले मे छिपाकर वह उड़न-चप्पलों पर अपने देश को लौट चला।

इथियोपिया के ऊपर से गुजरते हुए पर्सियस ने चट्टान से बंधी आंसू बहाती सुदरी ऐंड्रोमिडा को देखा।

उधर भयानक ह्वेल भी तट के पास पहुच रही थी – ऐंड्रोमिडा की बलि लेने।

पर्सियस बाज की भांति ह्वेल पर झपटा। बड़ी देर तक वह ह्वेल से जूझता रहा, अंत में उसने मेडूसा का डरावना सिर ह्वेल को दिखा दिया और वह [illegible] [illegible] विराट [illegible] डर के मारे बुत बन गया।

ह्वेल इथियोपिया के तट के पास [illegible] हो गयी। पर्सियस अपनी ऐंड्रोमिडा की जंजीर खोलकर उसे उसके पिता के पास ले गया।

राजा सेफियस की खुशी का ठिकाना न रहा और

उसने वीर पर्सियस से अपनी पुत्री ऐंड्रोमिडा का विवाह कर दिया।

आकाश मे अनेक नक्षत्र हैं और उनके बारे मे कहानिया भी अनेक हैं। उधर तारों से एक पक्षी बना हुआ है। यह हंस नक्षत्र है। कहा जाता था कि देवराज जेउस ही हंस बनकर पृथ्वी पर आ रहे हैं।

उधर एक और सुंदर नक्षत्र है ओरियन। इसका भारतीय नाम है मृग। यूनानी कथाओं के अनुसार ओरियन

निडर आखेटक है। वह गदा उठाकर किसी विराट पशु को मारने जा रहा है।

आकाश के दूसरी ओर वृश्चिक (बिच्छू) नक्षत्र छिपा हुआ है। इन तारों को देखकर लगता है कि इस दुष्ट कीट के अंग अंधेरे मे झिलमिला रहे हैं।

तारों भरा आकाश कथा-कहानियों की पूरी पुस्तक ही है। सभी तो हम सुना नही सकते।

अच्छा, कहानिया तो कहानिया ही है। हमे यह भी तो पता चलाना चाहिए कि तारे हैं क्या।

लोगों ने सदियों, सहस्राब्दियों तक इस पर बहुत सोचा-विचारा।

कुछ लोगों का कहना था कि तारे छत मे छोटे-छोटे छेद है, जिनमे प्रकाश छनकर आता है।

कुछ लोग यह मानते थे कि तारे आकाश मे ठुकी सोने-चांदी की कीलों की टोपिया हैं।

सभी लोग इस बात पर एकमत थे कि आकाश ठोस छत है, ठोस गुम्बद है। क्योंकि तारे कभी अपनी जगह से नहीं हटते। दिन, महीने, वर्ष बीतते है, लेकिन

वृश्चिक

तारों का हर पुंज, हर नक्षत्र जरा भी नही बदलता। सो, लोगों को यह लगता था कि वे कहीं लगे हुए है, जैसे दीवार पर कीले।

अगर तारे रोयों की तरह हवा मे "उड़ते" होते, तो वे अपनी जगह पर बनाई न बने रह पाते। तब नक्षत्र भी अपना रूप बदलते रहते। चूंकि नक्षत्र एक ही जगह "टुके" रहते हैं, इसका मतलब है आकाश ठोस है। अब यदि आकाश ठोस है तो उड़कर उस तक पहुंचा जा सकता है, उसे हाथ से छुआ जा सकता है।

लेकिन लोगों को उड़ना तो आता नहीं था, इसलिए बहुत समय तक वे यह नही पता लगा सके कि यह छत कितनी ऊंचाई पर है और कैसी है। पत्थर जैसी मजबूत और मोटी है? बिल्लौरी कांच जैसी नाजुक-पतली है? दिन मे यह नीली और रात को काली क्यों होती है?

क्या आकाश को बेधा जा सकता है?

सकता है वह नीचे रह गया हो? आओ नीचे देखें। पृथ्वी अपने स्थान पर है। उस पर बादल फैले हुए हैं, जैसे कि फर्श पर रुई के छोटे-छोटे टुकड़े। लेकिन इस सब पर पृथ्वी और बादलों पर आसमानी रंग का घना कुहासा-सा छाया हुआ है।

अच्छा तो, नीला आकाश वहां है। वह हमारे से नीचे रह गया! जब हम ऊपर उठ रहे थे तो हमें पता भी नहीं चला कब हमने उसे बेध दिया, उसे पार कर गये और अब "नीले आकाश से ऊपर" हैं!

इसका मतलब यह हुआ कि नीला आकाश पृथ्वी के बिल्कुल पास ही है, जैसे कि सुबह के समय दलदल पर छाया कोहरा। और यह नीला आकाश कोई इतना मोटा भी नहीं है—यही कोई तीस किलोमीटर, बस। इसे बेधना भी कोई मुश्किल काम नहीं है। हां, कोई छेद नहीं बचा रहता। धुएं या कोहरे में कैसा छेद हो सकता है?

सो, अब हमें पता चल गया कि आकाश दो हैं बिल्कुल भिन्न-भिन्न। एक आसमानी रंग का है, हमारे पास ही है और दूसरा उससे आगे है—काले रंग का।

देखा? हम सोच रहे थे कि एक ही "छत" है जो दिन और रात को रंग बदलती रहती है।

अब तो हमें यह पता चल गया है कि काली "छत" दिन को भी काली होती है। और यह रात-दिन सदा अपने स्थान पर रहती है। और तारे भी उस पर सदा चमकते रहते हैं। बस दिन में यह नीले आकाश के पीछे छिपा रहता है।

लेकिन नीला आकाश रात को कहां गुम हो जाता है?

कहीं गुम नहीं होता। वह तो बस पारदर्शी हो जाता है, अदृश्य हो जाता है।

नीला आकाश तो हवा ही है। वही हवा जिसमें हम-तुम सांस लेते हैं, पक्षी और विमान उड़ते समय पंखों से जिस पर टिके होते हैं।

हवा पारदर्शी है, किंतु पूरी तरह नहीं। उसमें सदा काफी धूल होती है। जब अंधेरा होता है तो यह धूल दिखायी नहीं देती। रात को हमें यह नज़र नहीं आती, सो हमें लगता है कि हमारे ऊपर हवा है ही नहीं। दिन में हवा पर सूरज का प्रकाश पड़ता है। हवा में उड़ता धूल का हर कण छोटी-सी चिंगारी की तरह चमकने लगता है। हवा धुंधली हो जाती है।

जरा यह याद करो कि अंधेरे कमरे में आती सूरज की किरण में हवा कितनी धुंधली लगती है।

हवा
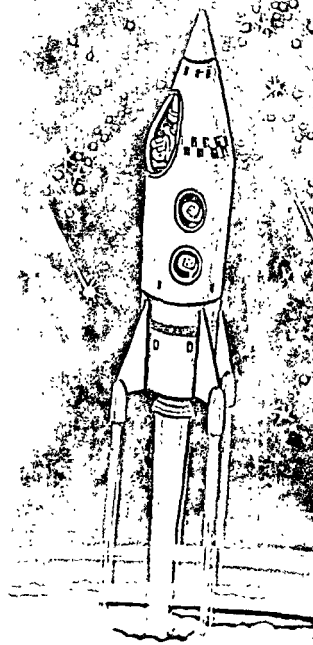
अच्छा तो अब हमारे ऊपर जो तारो भरा काला आकाश है वह क्या है? क्या वह बहुत दूर है?

हम पृथ्वी से दूर उडते जाते हैं। बहुत देर तक हमारा राकेट उड़ता जाता है। अब ऊंचाई १० हजार किलोमीटर है। तारे हमारे जरा भी पास नही आये, लेकिन पृथ्वी को यहा से अच्छी तरह देखा जा सकता है। ऐसा प्रतीत होता है कि पृथ्वी का सारा गोला पतली मलमलनुमा आसमानी परत में लिपटा हुआ है।

हम अब जानते हैं कि यह क्या है। यह धुंधली हवा है।

जो लोग इस परत के अदर, पृथ्वी पर बैठे हैं उनके लिए यह नीला आकाश है। वहां इस "छत" तले उन्हें अब तारे नही दीख रहे हैं, लेकिन हम उन्हे देख रहे हैं।

हवा की परत धीरे-धीरे पतली होती-होती विलुप्त हो जाती है। पृथ्वी से ३ हजार किलोमीटर की दूरी पर भी हवा है, लेकिन अत्यत विरल।

उससे आगे?

आगे हवा बिल्कुल नही है। वहां निर्वात है।

निर्वात क्या है? निर्वात हवा से किस बात में भिन्न है?

बहुत अंतर है दोनों मे।

निर्वात

हवा मे हम सास ले सकते हैं। निर्वात मे सांस लेने के लिए कुछ नही है। निर्वात में तो हमें विशेष अंतरिक्ष-पोशाक पहननी होगी, जिसमे एक भी छेद, एक भी दरार न हो। पीठ पर लटकते सिलंडरों से इस पोशाक में हवा भरी जायेगी।

हवा ठडी हो सकती है या गरम। इसलिए हवा में हमें कभी ठड लगती है तो कभी गरमी। निर्वात मे सदा एक सी ठड होती है। वहा अच्छी तरह गरम कपड़े पहनने होंगे। निर्वात में वैसा ही लगता है, जैसे कडाके की सर्दी में अलाव के सामने। एक ओर से सूरज का ताप है और दूसरी ओर से काले ताराच्छादित आकाश से ठड आती है।

ऐसे मौसम में जब हवा न चल रही हो यदि तुम चिडिया का पर आगे को फेको तो वह उड़ेगा नही, पास ही गिर पड़ेगा। वायु उसे उड़ने नही देती। निर्वात में उसके लिए कोई बाधा नही होगी। वहां यह पर दूर तक उड़ता जायेगा, जैसे कि वह भारी हो, लोहे का हो।

हवा में पक्षी उड़ते हैं। निर्वात में उन्हें जमीन पर चलना पड़े। पख वहा किसी काम के नही हैं। क्योंकि पक्षी जब उड़ते हैं तो पख हवा पर टिके रहते हैं, निर्वात मे वे किसी चीज पर नही टिके रहेंगे। निर्वात में हवाई जहाज भी नही उड़ सकते।

हवा से "लिपटे" पृथ्वी के गोले के चारों ओर जो निर्वात है उसे अंतरिक्षीय दिक् कहते हैं। सरलता के लिए इसे केवल अंतरिक्ष भी कह देते हैं।

तो अब यह देखो कि इस निर्वात मे हम किसी भी दिशा में कितनी भी दूर जाते जाये – महीने, साल, हजारों साल तक राकेट पर उड़ते जाये तो भी हम इस निर्वात के अंत तक, अतरिक्ष के अत तक, "काली छत" तक नहीं पहुचेगे।

अंतरिक्ष मे पृथ्वी वैसे ही है, जैसे कि निस्सीम महासागर के विस्तार मे खोया एक द्वीप।

अतरिक्ष मे दूसरे "द्वीप" भी हैं। वे पृथ्वी से नजर आते हैं। यह हैं चद्रमा, सूरज, तारे। हम उन तक पहुच सकते हैं, लेकिन उनसे आगे फिर वही काला निर्वात होगा।

इस निर्वात का कोई अत नही है। कोई "काली छत" है ही नहीं – न पत्थर की, न बिल्लौरी काच की।

इसलिए हम केवल नीले आकाश को ही "बेध" सकते हैं। ऐसा कर पाना कतई कठिन नही है। यह नीला आकाश हमारे बिल्कुल पास ही है और वह धुएं जैसा, कोहरे जैसा "नरम" है।
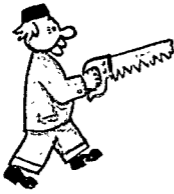
सूर्य और चंद्रमा किस चीज़ से बने हैं?

अभी कुछ साल पहले ही लोग अंतरिक्ष उड़ाने भरने लगे हैं। १९६१ में यूरी गगारिन ने सबसे पहले अंतरिक्ष उड़ान भरी। तब से अब तक विभिन्न देशों के कुल एक सौ से कुछ अधिक अंतरिक्षनाविकों ने उड़ाने भरी हैं।

लेकिन मनुष्य को ऐसी खतरनाक यात्रा पर भेजने से पहले अंतरिक्ष के बारे में कुछ जानकारी पा लेना जरूरी था।

तो पृथ्वी पर बैठे-बैठे लोगों ने कैसे यह पता लगाया कि रात का काला आकाश क्या है, चंद्रमा क्या है, सूरज क्या है, तारे क्या हैं? ऐसे तो तुम चाहे सारी-सारी रात बैठे आकाश को देखते रहो, वह छत ही लगता है, सूर्य और चंद्रमा उजली "चपातियां" लगते हैं और तारे केवल चमकीले बिंदु ही।

उन्हें अधिक अच्छी तरह कैसे देखा जाये?

कागज़ पर स्याही से बने छोटे से बिंदु को तुम आवर्धक लैंस से देख सकते हो। देखा है कभी? यों देखने में वह छोटा-सा बिंदु ही लगता है, लेकिन आवर्धक लैंस से देखो तो खूब बड़ा "भवरीला" धब्बा लगेगा। कागज़ भी चिकना कागज़ नहीं लगता, रोयेंदार ऊनी कपड़े जैसा लगता है।

आवर्धक लैंस से अपनी उंगली देखो तो वह बहुत बड़ी और मोटी लगती है। उस पर हर रेखा को अच्छी तरह देखा जा सकता है।

लेकिन कागज़ पर बिंदु और अपनी उंगली तो ऐसी चीजें हैं जो हमारे बिल्कुल पास ही हैं। आवर्धक लैंस को इनके पास ले जाया जा सकता है। आकाश के पास तो इसे नहीं ले जाया जा सकता।

पता है, आकाश के लिए भी अपने आवर्धक लैंस हैं!

तुमने कभी बाइनोकुलर देखा है? शायद देखा होगा। बाइनोकुलर भी तो आवर्धक लैंस है। बस यह वैसा नहीं है, जिसे "उंगली के बिल्कुल पास" ले जाना चाहिए। बाइनोकुलर से हम दूर की चीजें अच्छी तरह देख सकते हैं।

बाइनोकुलर लेकर सड़क के उस ओर देखो। ऐसा लगता है जैसे सब कुछ पास आ गया, बड़ा हो गया, है न?
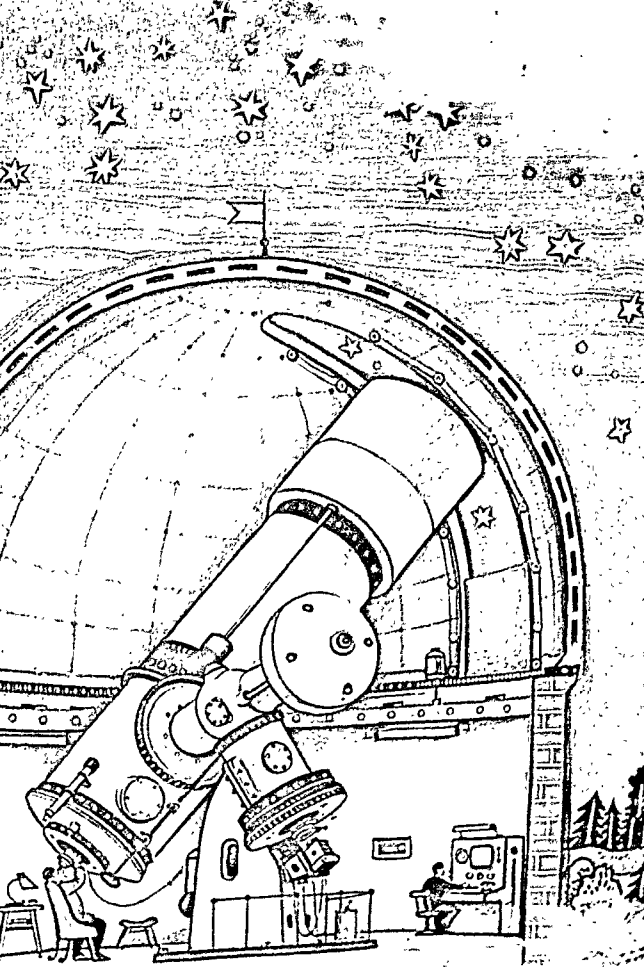
थियेटरो के लिए बने छोटे बाइनोकुलर चीजो को तीन गुना हमारे पास लाते है। नाविको के पास जो बडी दूरबीने होती हैं, वे चीजो को आठ गुना पास लाती हैं। ऐसी दूरबीन मे चद्रमा बहुत बडा लगता है, जैसे कि उसके और हमारे बीच की दूरी पहले से आठवे हिस्से के बराबर रह गयी हो। उस पर बहुत-से छोटे-छोटे धब्बे भी देखे जा सकते हैं, जो दूरबीन के बिना हमे नजर नही आते थे।

अब मान लो हम अलमारी जितनी बडी दूरबीन बना ले तो? वह तो चद्रमा को और भी पास दिखायेगी न? ऐन नाक के पास ले आयेगी न? जरूर।

इसके लिए तो दोनो आखो के लिए दूरबीन का एक-एक हिस्सा बनाने की भी जरूरत नही है, जैसे कि बाइनोकुलरो मे होते हैं। आकाश को तो एक आख मे भी देखा जा सकता है।

सो लोगो ने ऐसा "आधा बाइनोकुलर" बनाया, अलमारी जितना भी नही, पूरा बस जितना बडा।

लैस लगे इस विशाल पाइप को टेलीस्कोप कहते है।

यह तो इतना बडा होता है कि दो दर्जन आदमी भी इसे न उठा सके। ऐसे टेलीस्कोप को मजबूत आधार पर रखना पडा। इसे घुमाने का काम भी हाथो से नही हो सकता, यह काम बिजली की मोटरें बहुत-से दातेदार चक्को की मदद से करती हैं।

ऐसे हर टेलीस्कोप के लिए बहुत बडा घर – विशाल, गुम्बदनुमा मीनार बनायी जाती है।

ऐसी मीनार की छत खोली और बद की जा सकती है। जब आकाश को देखना होता है, तो छत को खोल देते है। जब काम खत्म हो जाता है तो छत बद कर देते हैं ताकि टेलीस्कोप बारिश से भीगे नही।

टेलीस्कोप बडी जटिल और महगी चीज है।

लेकिन कितना बड़ा करके दिखाता है यह! कई सौ, यहा तक कि हजार गुना बडा करके। ऐसे टेलीस्कोप मे देखते हुए एक किलोमीटर दूर रखी किताब पढी जा सकती है और वह ऐसे ही नजर आयेगी जैसे कि वह एक कदम दूर रखी हो!

ऐसी बढिया दूरबीनो-टेलीस्कोपो की मदद से लोगो ने सारे आकाश का प्रेक्षण किया है। उन्होने सूर्य, चद्रमा और तारो को बडे गौर से देखा है।

और इस तरह लोग पृथ्वी के चारो ओर जो कुछ है उसके बारे मे बहुत-सी रोचक बाते जान पाये हैं।

टेलीस्कोप ने लोगो को बहुत कुछ बताया है।

यह पता चला है कि सूर्य विराट गोला है। चद्रमा भी विशाल गोला है। तारे भी भीमकाय गोले है। तारे बहुत दूर है, बस इसीलिए छोटे-छोटे लगते हैं।

सडक की बत्ती जब बहुत दूर हो तब वह भी तो एक छोटा-सा बिदु ही लगती है।

अतरिक्ष मे जितने भी गोले है उन सबको "खगोलीय पिड" कहते हैं।

वे सभी बहुत भिन्न-भिन्न है।

सूर्य आग से बना है, केवल आग से। उसके अदर कुछ भी ठोस नही है। अगर सूर्य जितना बडा कोई दैत्य होता तो वह आराम से सूर्य को डडे से बेध सकता, जैसे अलाव की आग हम डडी से बेधते हैं। सूरज का कुछ भी न बिगडता। हा, डडा तुरत ही जल जाता।

तारे हमारे सूर्य से बहुत मिलते-जुलते हैं। वे भी आग से बने हैं।

तारे भी सूर्य की ही भाति विशाल अग्नि-पिड हैं। इनमे कई सूर्य से भी बडे है।

सूर्य हमारे अधिक निकट है, इसीलिए वह इतना बडा लगता है। इसीलिए वह इतना चमकता है और गरमी देता है। तारे सूर्य की अपेक्षा कही अधिक दूर है, इसीलिए उनका प्रकाश मद होता है और गरमी तो बिल्कुल ही नही होती।

चद्रमा भी गोला है, लेकिन वह पत्थर का गोला है, ठडा और ठोस। पृथ्वी जैसा। चंद्रमा स्वय नही चमकता।
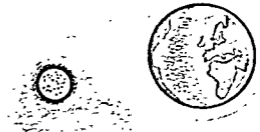
ठंडे पत्थर तो बत्तियां नहीं हो सकते न। चंद्रमा आकाश पर केवल इसलिए दिखायी देता है कि सूर्य उसे प्रकाशित करता है। सूर्य बुझ जाये तो चंद्रमा भी बुझ जायेगा।

हमने चंद्रमा, पृथ्वी और सूर्य के चित्र पास-पास बनाये हैं। चंद्रमा और पृथ्वी तो इस पृष्ठ पर आ गये हैं, लेकिन सूर्य का एक छोटा-सा "कोना" ही, उसे तो पूरी एक *अलमारी जितना बड़ा बनाना चाहिए।* पृथ्वी और चंद्रमा की तुलना में वह इतना बड़ा है!

खगोलीय पिंड अंतरिक्ष में एक दूसरे से बहुत दूर-दूर हैं। *यदि हम पृथ्वी को चैरी की बेरी जितना मानें,* तो मटर के दाने जितने चंद्रमा को उससे आधे मीटर की दूरी पर रखना चाहिए। ऐसे में सूर्य अलमारी जितना बड़ा होगा और पृथ्वी से २०० मीटर दूर होगा!

सबसे पास का तारा भी सूर्य की भांति अलमारी जितना होगा, लेकिन उस तक दूरी इतनी होगी कि उसे अमरीका या आस्ट्रेलिया में रखना होगा।

ऐसी दूरियां हैं खगोलीय पिंडों के बीच।

चंद्रमा हमारे सबसे निकट है। लेकिन उस तक पहुंचने के लिए भी हवाई जहाज को दो हफ्ते लगेंगे– जबकि वह बिना रुके उड़ता जाये।

लेनिनग्राद जैसे शहर की कल्पना करो। इस बड़े शहर को पैदल पार करने के लिए तुम्हें लगातार पांच घंटे चलना होगा। हवाई जहाज इस शहर के ऊपर से डेढ़ मिनट में गुज़र जायेगा। इतनी तेज़ उड़ता है वह!

इतनी तेज़ उड़ने पर भी चंद्रमा तक पहुंचने में दो हफ्ते लगेंगे। हां, बहुत दूर है चंद्रमा! तो भी दूसरे खगोलीय पिंडों की तुलना में वह हमारे बहुत पास है।

सूरज तक की दूरी तय करने में हवाई जहाज को पंद्रह साल लगें! स्कूल छात्र हवाई जहाज में बैठे और निकलें तो दाढ़ी-मूछोंवाले बड़े आदमी।

तारों तक तो इस गति से पहुंचा ही नहीं जा सकता। रास्ते का शुरू का हिस्सा भी पार नहीं होगा कि आदमी बूढ़ा हो जायेगा।

कैसा अपरिमेय है अंतरिक्ष!

और वहां सर्वत्र केवल निर्वात ही है!

इस निर्वात में सूर्य कैसे लटका हुआ है? चंद्रमा क्यों नहीं गिरता? पृथ्वी कैसे टिकी हुई है?
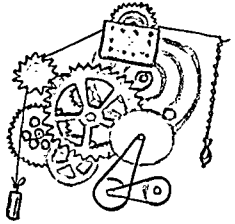
अंतरिक्ष में सब कुछ किसके सहारे टिका हुआ है?

एक गेद उठाओ और फिर उसे छोड दो। गेद तुरंत जमीन पर गिर पडेगी। गेद तो हवा मे नही लटकी रह सकती न? गेद जरूर किसी चीज पर टिकी होनी चाहिए। या तो वह फर्श पर पडी हो, या पानी पर तैरती हो, या धागे पर लटकती हो।

ससार मे हर चीज किसी न किसी सहारे पर टिकी होती है। और यदि कोई ऐसा सहारा नही होता जिस पर वह टिकी रह सके तो वह गिर जाती है।

तुम कहोगे कि यह बात सच नही है? गुब्बारा या हल्का रोया नीचे नही भी गिर सकते? ठीक है। वे तो ऊपर को भी उड जा सकते हैं। लेकिन ऐसा केवल इसलिए है कि गुब्बारा और रोया हवा के सहारे टिके होते हैं। वे इतने हल्के होते हैं कि हवा मे ऐसे ही तिरते है, जैसे कि टब मे भरे पानी मे लकडी का टुकड़ा। टब में से पानी निकाल दो, लकड़ी का टुकडा उसके तले पर बैठ जायेगा। यही बात हवा के लिए भी सही है। यदि पृथ्वी से सारी हवा हटायी जा सकती, तो हवा मे तिरती सभी चीजे "वायुमंडल के तले पर" यानी पृथ्वी पर आ गिरती। गुब्बारे और रोये भी गिर पडते। पक्षी और हवाई जहाज भी न उड सकते। वे भी तो हवा पर टिके होते हैं।

संसार मे हर वस्तु यदि वह किसी पर टिकी नही रह सकती तो नीचे गिरती है।

अतरिक्ष मे तो टिकने का कोई सहारा नही है। अतरिक्ष मे निर्वात है। पृथ्वी किसी चीज पर रखी नही रह सकती, न वह गिर सकती है।

तो फिर पृथ्वी, चद्रमा, सूर्य और तारो भीमकाय पिंड बिना किसी सहारे के निर्वात मे लटके रह सकते हैं?

पृथ्वी गिरती क्यो नही?

गिरती नही? किसने कहा?

यही तो बात है कि पृथ्वी हमे साथ लिये सार समय गिरती रहती है, अथाह गर्त मे गिरती रहती है।

क्या है यह सब? ऐसे गोले पर बैठते तो डर लगता है जो कही गिरता जा रहा है। अगर कही गिर रहा है तो आखिर एक न एक दिन जरूर कही जा टकरायेगा? पृथ्वी किधर गिर रही है? वह किससे टकरायेगी?

आओ, जरा यह सोचे कि सभी चीजे किधर गिरती है?

क्या मतलब किधर? नीचे की ओर? लेकिन यह "नीचा" है कहा?

क्या अजीब सवाल है! नीचा नीचे है।

आओ, हम सारी पृथ्वी का चित्र बनाये। पृथ्वी एक गोला है न? गोला है! इस गोले पर चारो ओर लोग रहते है न? चारो ओर रहते है।

तो लो, हमने पृथ्वी के गोले पर चारो ओर चार बालक बना दिये हैं। चारो बालको की गेदे पृथ्वी पर गिरेगी। सभी बालक कहेगे कि उनकी गेद नीचे गिरी है।

लेकिन केवल एक बालक की गेद "नीचे" गिरते हुए हमारे चित्र पर सचमुच नीचे आयी है। दूसरे की गेद "नीचे" गिरते हुए हमारे चित्र पर दाये को गयी है, तीसरे की गेद बाये को और चौथे की तो ऊपर को ही।

अब यदि हम किताब को उलटा करके देखे तो चौथे बालक की गेद नीचे जायेगी और पहले की ऊपर को।

इसका मतलब है कि "नीचे" कही भी हो सकता है—नीचे, बगल मे और ऊपर भी।

"नीचे" पृथ्वी है, पृथ्वी का गोला है।

पृथ्वी पर जो कुछ भी है वह पृथ्वी पर गिरता है, चारो ओर से पृथ्वी पर ही आता है।

पृथ्वी चारो ओर जो कुछ है उसे अपनी ओर खीचती है, जैसे चुम्बक लोहे की कीलें खीचता है।

यह मत सोचो कि पृथ्वी ही ऐसी "लालची" है। सभी वस्तुए एक दूसरी को अपनी ओर खीचती है, लेकिन उनकी शक्ति बहुत क्षीण होती है।

अलमारी सोफे को अपनी ओर खीचती है, लेकिन इतनी कम शक्ति से कि वह कभी उसे टस से मस नही कर सकती। सोफा तो क्या गेद तक को वह नही हिला सकती।

मकान अलमारी को अपनी ओर खीचता है। लेकिन वह भी अलमारी को हिला पाने मे असमर्थ है।

पहाड मकान को अपनी ओर खीचता है, लेकिन वह भी मकान को जरा-सा हिला तक नही सकता।

लेकिन पृथ्वी उन सबसे कही बड़ी है और वह इन सबको इतनी जोर से अपनी ओर खीचती है कि इसका पता तुरत चलता है। पृथ्वी ने अलमारी को इस तरह अपनी ओर खीच लिया है, इस तरह उसे पकडे हुए है कि तुम उसे अपनी जगह से हटाकर तो देखो! तुम कहते हो अलमारी भारी है? "भारी" का मतलब ही है "पृथ्वी द्वारा अपनी ओर जोर से खीचा हुआ"।

यदि अचानक ऐसा हो जाये कि पृथ्वी पर जो कुछ है उसे पृथ्वी अपनी ओर आकर्षित न करे तो हमारी यह अलमारी फर्श से हट जाये और कमरे मे यो तैरने लगे जैसे पानी मे तिनका। और तब वह भारी नहीं गुब्बारे जैसी हल्की हो।

बस इसी तरह सभी वस्तुए एक दूसरी को अपनी ओर खीचती है, आकर्षित करती हैं। लेकिन खीच वही पाती है जो अधिक शक्तिशाली होती है, अधिक बडी होती है। छोटी, कमजोर चीज बडी, शक्तिशाली चीज की ओर खिचती चली जाती है, उस पर जा गिरती है।

यही कारण है कि सदा छोटी वस्तु ही बड़ी पर गिरती है।

अब हम इस प्रश्न पर लौटते है कि अंतरिक्ष में स्वय पृथ्वी किधर गिर रही है?

चद्रमा की ओर? नही। चद्रमा तो पृथ्वी से छोटा है। तारो की ओर? वे बहुत दूर हैं। सूर्य की ओर? हा, सूर्य की ओर ही।

छोटी वस्तु सदा बडी पर गिरती है। हमारी विशाल धरती सूर्य के सामने बिल्कुल छोटी-सी ही है।

इसीलिए पृथ्वी सूर्य की ओर गिर रही है!

लेकिन यह तो बडी भयानक बात है! सूर्य तो अग्नि-पिड है। इसका मतलब है जल्दी ही पृथ्वी सूर्य पर जा गिरेगी और आग की लपटों में समा जायेगी? हम सब जैसे भट्टी मे जल जायेंगे?

डरो मत। किसी की ओर गिरते-गिरते उस पर न गिरना भी सभव है। उसके बगल से गिरा जा सकता है।

"वामन डग" नाम का एक झूला होता है। शायद तुम्हारे शहर के पार्क मे भी हो। इसमे एक खभे के ऊपर एक घूमता हुआ छल्ला लगा रहता है। इस छल्ले से बधी कुछ जजीरे लटकती हैं। इस जजीर का सिरा पकडकर खभे से दूर हट जाओ और खडे-खडे ही घुटने मोड़ लो तो क्या होगा?

तुम सीधे खभे की ओर बढ जाओगे, जैसे कि वह तुम्हे अपनी ओर खीच रहा हो।

लेकिन यदि तुम पहले एक ओर को दौडो और फिर टागे मोडो?

तब तुम खभे के बगल से आगे निकल जाओगे।

इस झूले पर झूलते हुए सारा समय यही लगता है कि खभा तुम्हे अपनी ओर खीच रहा है। इसलिए तुम सीधे नही बढ जाते हो, बल्कि खभे की ओर मुड-मुड जाते हो, उसकी ओर गिरते हो। लेकिन तुम तेजी से
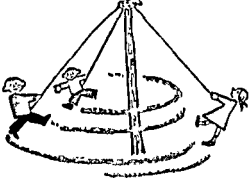
बढ़ते हो, इसलिए एकदम तिरछे नही मुड़ सकते, वक्र रेखा मे मुडते हो, सो हर बार खभे की ओर गिरने के बजाय उसके बगल से आगे बढ जाते हो, उसका चक्कर लगाते हो।

कुछ ऐसी ही बात अतरिक्ष मे होती है। वहा खभे की जगह सूर्य है और तुम्हारी जगह पृथ्वी।

यदि पृथ्वी एक स्थान पर खडी होती तो वह सीधे सूर्य की ओर गिरती।

लेकिन यही तो सारी बात है कि वह एक स्थान पर नही खड़ी है। वह एक ओर को "उडती" है, मानो उसने सूरज के बगल से आगे निकलकर कही दूर उड जाने के लिए दौड़ लगायी हो। सूर्य उसे अपनी ओर खींचता है। पृथ्वी उसकी ओर मुडती है। लेकिन वह धीरे-धीरे, वक्र रेखा मे मुडती है, क्योंकि उसकी अपनी गति काफी तेज है। इसीलिए वह सूरज के पास नही पहुचती है, बस उसकी परिक्रमा करती है, उसके गिर्द घूमती है।

वैसे ही जैसे झूले मे तुम खभे के गिर्द घूमते हो।

हा, तुम्हे बार-बार पैरो से जमीन पर धक्का लेना पडता है, ताकि रुको नही। ऐसा इसलिए होता है कि खभे के ऊपर जो छल्ला है वह अच्छी तरह नही घूमता, रगड खाता है। हवा भी तुम्हे रोकती है। अतरिक्ष मे पृथ्वी को कुछ भी नही रोकता है। वहा सामने से बहती हवा भी नही है, छल्ले पर बधी रस्सी भी नही है और रास्ते का ऊबड-खाबडपन भी नही है। वहा तो कुछ भी नही है। पृथ्वी कभी एक ओर को उड चली थी, बस इतना ही काफी सिद्ध हुआ। तब से कुछ अरब वर्षो से वह सूर्य की परिक्रमा कर रही है और रुक नही सकती।

इसी तरह चद्रमा भी अतरिक्ष मे गतिशील है।

हा, चद्रमा सूर्य की नही पृथ्वी की परिक्रमा करता है। पृथ्वी चद्रमा से कई गुनी बडी है, सो चद्रमा इस बडी पृथ्वी की ओर गिरता है, लेकिन उस पर गिर नही पाता—बगल मे आगे निकल जाता है। क्योंकि चद्रमा भी तेज़ी से एक ओर को उड रहा है और उसके लिए भी तेज़ी से मुडना कठिन है।

तो बात यह निकलती है कि सभी खगोलीय पिड अतरिक्ष मे किसी भी सहारे पर नही टिके हुए है, बल्कि सभी कही गिरते जाते हैं, मगर बगल से निकलते रहते हैं।

इसीलिए वे सब सदा घूमते हैं, परिक्रमा करते हैं। चद्रमा पृथ्वी की परिक्रमा करता है, पृथ्वी सूर्य की।

सूर्य भी पृथ्वी और चद्रमा समेत एक स्थान पर नही खडा है।

वह भी किसी अथाह गर्त मे, तारो के बीच कही बढ रहा है। ये तारे भी निर्वात मे कही चक्कर काट रहे है।

अतरिक्ष मे एक भी खगोलीय पिड ऐसा नही है, जो एक स्थान पर खडा हो। सभी कही बढते जाते है, अतरिक्ष मे स्थान की तो कोई कमी है नही।

लेकिन यह क्या अजीब बात है—जब तुम आकाश को देखते हो तो यह नही लगता कि खगोलीय पिड कही दूर जाते जा रहे है। चद्रमा तो आकाश पर चिपका हुआ ही लगता है। ऐसा इसलिए है कि चद्रमा हम से बहुत दूर है।

तुमने कभी इस बात की ओर ध्यान दिया है कि समुद्र मे ऐन क्षितिज के पास जब कोई जहाज नज़र आता है तो वह कितनी धीरे-धीरे रेगता प्रतीत होता है? वास्तव मे तो वह बड़ा तेज़ी से लहरो को काटता बढ रहा होता है। आकाश मे हवाई जहाज जब एक बिदु जैसा नजर आता है तो वह भी कितनी धीरे-धीरे बढता है।

चद्रमा तो आकाश मे हवाई जहाज से चार गुनी अधिक गति से बढता है। जरा सोचो तो कि यदि हम उसके पास खडे होते तो वह कितनी तेज़ी से हमारे सामने से गुज़र जाता? पृथ्वी से तो ऐसा लगता है कि वह मुश्किल से रेग ही रहा है—इसका भी पता आस-पास के तारो को देखने से लगता है।

तारे तो चद्रमा की तुलना मे सैकडो हज़ारो गुना अधिक दूर हैं। इसीलिए वे बिल्कुल निश्चल लगते हैं। हालांकि वे चद्रमा से कही अधिक तेज़ी से उडते जाते है।

सूर्य उगता और डूबता क्यों है?

तुम्हारा क्या ख्याल है क्या हम सूर्य के बिना रह सकते हैं? नहीं, कतई नहीं।

सूर्य पृथ्वी को प्रकाश और ऊष्मा देता है। सूर्य की ऊष्मा के बिना बीजों के अंकुर नहीं फूटते, पेड़ों पर पत्तियां नहीं उगतीं, खेत हरे-भरे नहीं होते। पशु-पक्षी, कीट-पतंगे धूप पाकर खुश होते हैं और हम, मनुष्य भी।

सूर्य के बिना अंधेरा होता है, ठंड होती है। सभी जीव रात को कहीं छिप जाते, सो जाते, ठंड और अंधकार का समय गुजारने की कोशिश करते हैं। जब सूर्योदय होता है तो सारी प्रकृति जाग उठती है।

सूर्य पृथ्वी पर जीवन का स्रोत है। उसकी आवश्यकता सभी को है। यही कारण है कि प्राचीनतम काल से ही लोग सूर्य देवता की पूजा करने लगे, उससे मिलनेवाली ऊष्मा के लिए आभार प्रकट करते थे, उसके उगने का स्वागत करते थे।

यह देखो, प्राचीन यूनान में सूर्य के बारे में कैसी कथा सुनायी जाती थी।

...मंद समीर बह चला है। पूरब में उजाला बढ़ता जाता है। उषा की देवी ऐओस अपने गुलाबी हाथों से वह द्वार खोलती है जहां से तेजस्वी सूर्य देवता–हीलियस अपने रथ पर निकलेगा।

केसरी वस्त्र धारण किये अपने गुलाबी पंखों पर उषा की देवी उज्ज्वल आकाश पर उड़ आती है, जहां गुलाबी आभा छा गयी है। अपने स्वर्ण कलश से वह पृथ्वी पर ओस गिराती है और हीरों से चमकते ओस-कण फूल-पौधों पर बिखर जाते हैं। पृथ्वी पर सब कुछ सुरभित हो उठता है। जाग उठी धरती सूर्य देवता हीलियस के उदय का हर्षित स्वागत करती है।

हेफेस्त देवता के बनाये स्वर्ण-रथ में चार सपक्ष अश्व जुते हुए हैं। कांतिमय हीलियस इस रथ पर सवार होकर ओशियन के तट से आकाश को चलता है। पर्वत-शिखर रवि-किरणों से चमक उठते हैं। सूर्य देवता को देखते ही तारे आकाश से विलुप्त हो जाते हैं! एक एक करके वे रात्रि की गोद में छिप जाते हैं।

हीलियस देवता का रथ ऊपर ही ऊपर चढ़ता जाता है। देदीप्यमान मुकुट और लंबे चमकीले वस्त्र धारण किये वह आकाश पर चलता जाता है और अपनी जीवनदायी किरणें पृथ्वी पर भेजता है, उसे प्रकाश, ऊष्मा और जीवन प्रदान करता है।

अपनी दिवस-यात्रा समाप्त करके सूर्य देवता हीलियस ओशियन के पवित्र जल पर उतरता है। वहां
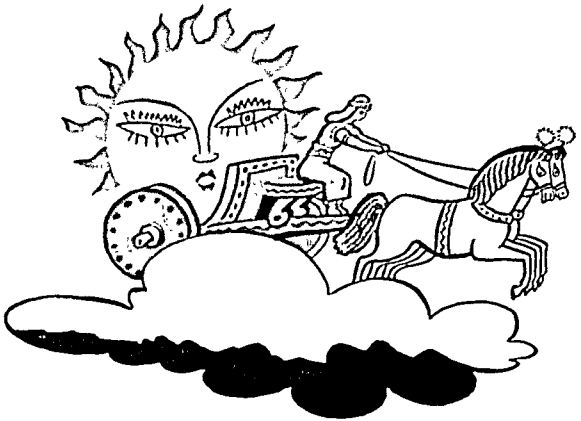
स्वर्ण-नौका उसकी प्रतीक्षा कर रही है। उस पर बैठकर वह पूरब को, सूर्य देश को लौटता है, जहा उसका अनुपम महल है। सूर्य देवता वहा रात को विश्राम करता है, ताकि अगले दिन फिर पहले जैसा तेज लिये उदय हो।

एक और कहानी सुनो जो ठडे स्कैडिनावियाई देशों के निवासियो ने बहुत पहले गढ़ी थी।

बहुत पहले की बात है। तब न सूर्य था, न चद्रमा। पृथ्वी पर सदा अधकार रहता था। सूर्य नही था, इसलिए पेड भी हरे-भरे नही होते थे, फूल नही खिलते थे, मैदानो मे हरी-हरी घास नही उगती थी।

तब ओदिन नाम का महाबली देवता अपने भाइयो के साथ अग्नि-देश को गया। वहा अग्नि पाकर उसने सूर्य और चद्रमा बनाये। देवताओ ने अब तक जो कुछ बनाया था उस सबसे अधिक सुदर थे ये।

अब उन्हे किसी ऐसे व्यक्ति की तलाश करनी थी, जो इनके रथ आकाश पर चलाया करे।

उन दिनों पृथ्वी पर एक आदमी रहता था, जिसके एक अत्यत रूपवान बेटा था और उतनी ही रूपवती एक बेटी भी। पिता को अपनी संतान पर बहुत घमड था। वह सोचता था कि ससार मे उनसे अधिक सुदर और कुछ नही हो सकता।

जब पिता को देवताओ की अनुपम रचनाओं के बारे में पता चला तो उसने अपनी बेटी का नाम रख दिया सुल जिसका अर्थ है सूर्य और बेटे का नाम रखा मनि, जिसका अर्थ है चद्रमा।

देवताओ को उसका यह दभ अच्छा नहीं लगा और उन्होंने इस व्यक्ति को कठोर दड दिया।

ओदिन देवता सुल और मनि को आकाश पर ले गया और उन्हे सारथि बना दिया।

तब से सुल सूर्य के रथ के श्वेत अश्वों को चलाती है। प्रति दिन वह सूर्य को आकाश पर ले जाती है, बस रात को ही थोडा आराम कर पाती है।

उसका भाई मनि दूसरे रथ पर चद्रमा का सारथि है।

तब से खेतो मे अनाज उगने लगा है, बागो मे फल पकते हैं, पहाडों पर हरे-भरे जगल उगते हैं। लोग इन्हे देखकर खुश होते हैं और देवताओ का आभार प्रकट करते हैं।

लेकिन भाई-बहन कभी-कभी दुखी होकर रोने लगते

है। तब सूर्य और चंद्रमा पर धुंध-सी छा जाती है।

हा, ये तो कहानिया है, लेकिन वास्तव मे सूरज कैसे चलता है? वह उगता और डूबता क्यो है, आकाश मे एक ही जगह पर क्यो नही बना रहता?

याद है तुमने लकडी के घोड़ो पर सवार होकर चकफेरी का झूला झूला था और पास ही ऊचे खभे पर खूब बड़ा बल्व तेज़ रोशनी दे रहा था। यह रोशनी चकफेरी के पीछे से प्रकट होती थी, पास से निकल जाती थी और फिर से चकफेरी के पीछे छिप जाती थी। कुछ देर तक रोशनी बिल्कुल नही दिखायी देती थी, अधेरा रहता था, लेकिन फिर से वह प्रकट होती, तुम्हारे लिए उजाला करती और फिर से छिप जाती थी।

लेकिन खभा तो अपनी जगह पर खडा था। खभे पर जलता बल्ब रोशनी दे रहा था, जबकि चकफेरी घूम रही थी, कभी तुम्हे इस रोशनी से छिपा देती थी और कभी फिर इस रोशनी मे ले आती थी।

यही बात पृथ्वी पर लोगो के साथ होती है। पृथ्वी अतरिक्ष मे सूर्य की परिक्रमा ही नही करती है। परिक्रमा करने के साथ-साथ वह चकफेरी की तरह घूमती भी है: कभी हमे सूरज से छिपा देती है, कभी सूरज के सामने ले आती है।

हमे लगता है कि पृथ्वी अपनी जगह खडी है और सूरज हमारे गिर्द घूम रहा है।

ऐसा हमे इसलिए लगता है क्योकि पृथ्वी का गोला बहुत बडा है। इतना विशाल गोला किसी मामूली लट्टू की तरह तेज़ी से नही घूम सकता। वह धीरे-धीरे एकसमान गति से, धचके खाये बिना घूमता है।

पूरे चौबीस घटे मे पृथ्वी अपनी धुरी पर एक चक्कर लगाती है। इसीलिए हमे उसके घूमने का पता नही लगता।

समुद्र मे यदि बहुत बडे जहाज पर जा रहे होओ तो वहा भी यह पता नही चलता कि जहाज कैसे मुड रहा है।

हा, अगर तट दिखायी दे रहा हो तो उससे जहाज़ के मुडने का पता चल सकता है। लेकिन यदि तट ओझल हो चुका है? यदि जहाज़ खुले सागर मे जा रहा है? ऐसी हालत मे सूरज से ही जहाज़ के मुडने का पता चल सकता है। मान लो तुम डेक पर उस तरफ बैठे हो जहा छाया है। अचानक देखते हो कि धूप तुम्हारी तरफ बढ रही है। इसका मतलब है कि जहाज मुड रहा है, उसका यह पहलू सूरज की ओर आ रहा है।

यही बात पृथ्वी के साथ होती है।

सूर्य जब मकान या जहाज के पीछे से निकल रहा हो तो उसे ध्यान से देखो। लगता है कि सूर्य धीरे-धीरे आकाश पर रेग रहा है। वास्तव मे हमारी पृथ्वी विशाल जहाज़ की तरह धूप की ओर मुड रही है।

सूर्य का प्रकाश पृथ्वी के केवल उस आधे भाग पर पडता है, जो उसकी ओर मुडा होता है। दूसरे आधे भाग पर इस समय अधकार होता है। वहा रात होती है। फिर जब पृथ्वी घूम जायेगी तो जहा दिन था – वहा रात हो जायेगी और जहा रात थी वहा दिन हो जायेगा।

तुम अच्छी तरह इस बात की कल्पना कर सको कि पृथ्वी कैसे घूमती है इसके लिए चित्र मे हमने पृथ्वी *की धुरी बना दी है। वास्तव मे तो कोई धुरी नही है।* यह तो हमने कल्पना की है।

वे स्थान, जहा से यह कल्पित धुरी पृथ्वी के गोले से बाहर निकली होनी चाहिए, ध्रुव कहलाते है। ऊपरवाला उत्तर ध्रुव कहलाता है और नीचेवाला दक्षिण ध्रुव। ध्रुवो के ऐन बीचोबीच पृथ्वी की परिधि पर रेखा खीचे तो वह भूमध्य रेखा होगी।

हम-तुम भूमध्य रेखा और उत्तर ध्रुव के बीच पृथ्वी के ऊपरी भाग पर रहते हैं। इसे उत्तरी गोलार्ध कहते है।

सूर्य की एक परिक्रमा करने मे पृथ्वी को काफ़ी समय लगता है। एक साल मे ही वह एक परिक्रमा कर पाती है। इस बीच वह अपनी धुरी पर ३६५ बार घूम जाती है। इसीलिए साल मे ३६५ दिन और ३६५ राते होती हैं।

चद्रमा भी सूर्य की ही भाति प्रति दिन उगता और डूबता है। यदि तुम तारो को ध्यान मे देखो तो पाओगे कि तारो भरा सारा आकाश भी धीरे-धीरे घूमता है। किसी चमकीले तारे पर नजर रखो। अभी वह यहा है। घटे भर बाद साफ पता चलेगा कि वह अपनी जगह से हट गया है। लेकिन पूरा एक चक्कर लगाकर फिर से अपने पहलेवाले स्थान पर पहुच जायेगा।

धुरी उत्तर ध्रुव
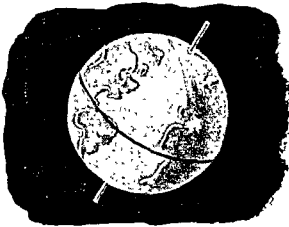
दक्षिण ध्रुव धुरी

ऐसा इसलिए होता है कि पृथ्वी सारा समय धीरे-धीरे घूमती रहती है। हम विराट चकफेरी पर बैठे हैं और उसके साथ घूमते रहते हैं। लेकिन हमें लगता यह है *कि हमारे चारों ओर सब कुछ, सारा अंतरिक्ष घूम* रहा है।

अब जरा यह कल्पना करो कि तुम चकफेरी की छत पर बैठे हो, उस जगह जहां प्रायः झंडी लगी होती है। चकफेरी घूम रही है, तुम सिर ऊपर उठाये आकाश को देख रहे हो। तुम्हारे चारों ओर मकान और पेड़ घूमते हैं, लेकिन वह बादल जो तुम्हारे सिर के ऐन ऊपर है, एक ही जगह पर बना रहता है। मानो वहां "कील" ठुकी हो और बाकी सब कुछ गत्ते पर बना हो और यह गत्ता इस "कील" पर घूम रहा हो।

पृथ्वी का ध्रुव चकफेरी की छत जैसा है। यदि हम-तुम ध्रुव पर खड़े हों तो हमारे सिर के ऐन ऊपर ध्रुव तारा होगा। याद है हमने इस तारे का जिक्र किया था? तो यह तारा ही "कील" है।

पृथ्वी धीरे-धीरे घूमती है। सारा आकाश मंडल जैसे उससे विपरीत दिशा में घूमता है, लेकिन ध्रुव तारा एक ही स्थान पर खड़ा रहता है।

यदि हम ध्रुव से भूमध्य रेखा पर आ जायें तो यहां तारों भरा आकाश बिल्कुल दूसरी ही तरह चलेगा। यहां से ध्रुव तारा क्षितिज पर निश्चल खड़ा लगता है, उस ओर जहां उत्तर ध्रुव है। यदि भूमध्य रेखा पर खड़े होकर पूरब की ओर देखा जाये तो ताराच्छादित आकाश *थियेटर के विशाल पर्दे की तरह मंथर गति से ऊपर* उठता नजर आयेगा। पश्चिम में तारे इसी तरह एकदम सीधे क्षितिज की ओर झुकते आते हैं।

भूमध्य रेखा पर सूर्य और चंद्रमा को डूबते देखना बड़ा रोचक होता है। वे भी तारों की ही भांति एकदम सीधी रेखा में नीचे आते हैं, जैसे कि कोई उन्हें धागे में बांधकर क्षितिज के पीछे डुबो रहा हो।

हम-तुम न ध्रुव पर रहते हैं, न भूमध्य रेखा पर। हम बीच में रहते हैं। इसलिए ध्रुव तारा सिर के ऐन ऊपर नहीं, बल्कि नीचे को नजर आता है। इसीलिए सूरज और चंद्रमा हमारे यहां जब उगते हैं तो ऐसा लगता है जैसे वे धीरे-धीरे पहाड़ पर चढ़ते हुए नत रेखा में ऊपर उठ रहे हों। और जब डूबते हैं तो जैसे ढलान से उतरते हैं।

यह सब इसलिए होता है कि पृथ्वी एक गोला है *और यह गोला घूमता है।*
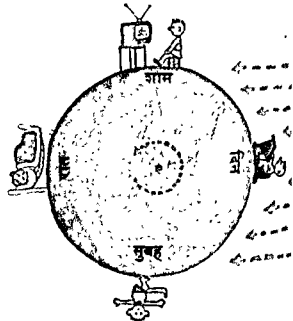
गर्मियों में धूप अधिक तेज़ क्यों होती है?

गर्मियो मे धूप जाडो से अधिक तेज क्यों होती है? क्या इसलिए कि गर्मियो में पृथ्वी सूर्य के अधिक समीप आ जाती है। यदि ऐसा होता तो गर्मियों में आकाश पर सूर्य जाडो से अधिक बडा दिखायी देता। सभी वस्तुए पास से अधिक बड़ी नजर आती हैं और दूर से छोटी। सूर्य तो आकाश पर सदा एक ही आकार का होता है— गर्मियो मे भी और जाडो मे भी।

हा, लगता है, बात हमे गर्मी देनेवाली इस "भट्ठी" तक की दूरी की नहीं है।

जरा यह याद करो कि गर्मियो मे और जाडो में सूर्य आकाश पर कहा होता है। गर्मियो मे वह अधिक ऊपर उठता है और जितना अधिक वह ऊपर उठता है, उतनी ही उसकी किरणे तेज होती हैं। दिन मे तो धूप सुबह से अधिक तेज होती है न? गर्मियो के दिन भी जाडो से अधिक लबे होते है। गर्मियो मे सूरज जल्दी उगता है और देर से डूबता है। लबे दिन मे वह हवा को, पृथ्वी को और हमे-तुम्हे अच्छी तरह गरमा देता है, यही कारण है कि गर्मियो मे जाडो की अपेक्षा ताप-मान अधिक होता है।

उत्तरी देशो मे गर्मियो के बाद पतझड का मौसम आता है। सूर्य दिन प्रति दिन आकाश पर नीचे आता जाता है। वह अधिक देर से उदय होता है और पहले से जल्दी अस्त हो जाता है। दिन प्रति दिन उससे मिलने-वाला प्रकाश और उष्मा घटते जाते है। ठड बढती जाती है और अधेरा भी।

फिर जाड़ा आता है। दिसम्बर मे सूर्य कुछ घटो के लिए ही आकाश पर प्रकट होता है, अक्सर बादलो के कारण उसके भी दर्शन नही हो पाते। वह आकाश पर बिल्कुल नीचे होता है लगता है मकानो, पेडो के पीछे ही कहीं है।

सुदूर उत्तर मे, ध्रुवीय प्रदेश मे तो और भी बुरी हालत होती है। वहा जाडो मे सूर्य और भी अधिक क्षीण पड़ जाता है। वह क्षितिज से जरा-सा ही ऊपर उठता है। दिसम्बर के मध्य तक उसमे उठने की भी क्षमता नही रहती। वह घटे-दो घटे के लिए आकाश पर जरा उजाला भर कर देता है और फिर से रात हो जाती है। इसके कुछ दिनो बाद तो आकाश पर उजाला तक नही होता। कुछ हफ्तो तक काली रात छायी रहती है। बहुत ही ठड हो जाती है। चारो ओर अभेद्य अधकार होता है।
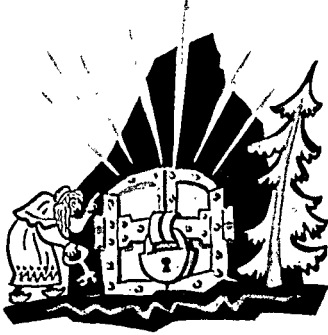
मन को बहुत ढाढस देते पर भी हर बार डर लगता है। कहीं सूरज सदा के लिए तो नहीं चला गया? कहीं अंधकार और ठंड का यह राज सदा के लिए हो गया तो? आदमी तब कैसे जियेगा? कैसे उसका उद्धार होगा?

अतीत में तो लोगों को और भी अधिक डर लगता था। तब न पुस्तकें थीं, न स्कूल। किसी को ठीक से कुछ पता नहीं था। कोई ऐसा नहीं था, जिससे वे कुछ पूछ सकते।

उदास मन से वे विदा होते सूर्य को, काली चट्टानों को, निद्रामग्न होते वन को देखते और कथा-कहानियां सोचते।

जाड़ों में जहां सूर्य बहुत दिनों के लिए डूब जाता है, सुदूर उत्तर का वह देश इन कहानियों में अंधकार और ठंड का देश पोहयोला हो गया। दुष्ट बूढ़ी जादूगरनी लोउहा पोहयोला पर राज करती थी।

वहां से थोड़ी दूर सूर्य-स्नात देश कलेवल में तीन महाबली रहते थे, तीनों गहरे मित्र थे।

एक था बूढ़ा मनीषी वायनेमेयनेन। वह इतनी अच्छी तरह गाता था कि वन के पशु-पक्षी भी उसके गीत सुनने के लिए जमा हो जाते थे।

दूसरा था लोहार इलमरिनेन। उसके हाथों में गज़ब का हुनर था और वह अथक परिश्रम करता था।

तीसरा था निडर और हसमुख शिकारी लेम्मिन-कायनेन।

अंधकार और ठंड का देश पोहयोला इन महाबलियों को आकर्षित करता था। बात यह थी कि बुढ़िया लोउहा के एक बेटी थी—बहुत ही सुन्दर। यह सुंदरी आकाश पर सतरंगे इंद्रधनुष पर बैठी चांदी के करघे पर सोने का कपड़ा बुनती थी।

तीनों महाबली बारी-बारी से सुंदरी का रिश्ता मांगने गये, लेकिन वह बड़ी नखरीली थी।

उधर बुढ़िया भी महाबलियों को बड़ी यंत्रणाएं देती थी। उन्हें एक से एक कठिन कारनामे करने को कहती और फिर भगा देती।

पर आखिर इलमरिनेन लोहार से बुढ़िया ने अपनी बेटी का विवाह कर दिया। इसके लिए भी वह तब राजी हुई जब इलमरिनेन ने लोभी बुढ़िया के लिए जादुई चक्की साममो बना दी। इस चक्की में कुछ नहीं डालना होता था और उसे चलाना भी नहीं होता था। वह अपने आप ही चलती थी और उसमें से जो चाहो वही निकलने लगता था—आटा चाहो आटा, नमक चाहो नमक, और तो और पैसे भी निकलते थे।

इलमरिनेन अपनी जवान पत्नी को लेकर घर लौटा। लेकिन वह दुष्ट स्वभाव की औरत निकली। एक दिन ग्वाले के लिए रोटी पकाते हुए उसने उसमें कंकड़ मिला दिये। ग्वाले को बड़ा बुरा लगा, उसने गउओं के झुंड को भेड़ियों का झुंड बना दिया और इन भेड़ियों ने दुष्ट मालकिन को चीर डाला।

तब महाबलियों ने निश्चय किया कि वे बुढ़िया लोउहा से जादुई चक्की साममो वापस ले लेंगे। बुढ़िया तो अपने लिए ही धन-दौलत जमा कर रही थी, जबकि चक्की सभी लोगों को सुखी बना सकती थी।

पोहयोला के सभी योद्धा महाबलियों का सामना करने निकले। लेकिन वायनेमेयनेन गाने लगा और सभी योद्धा सो गये। महाबलियों ने बुढ़िया का खज़ाना खोला, साममो चक्की ली और नाव पर बैठकर समुद्र के रास्ते घर लौट चले।

इस बीच बुढ़िया जाग गयी। उसने देखा कि साममो चक्की नहीं है। गुस्से से आग बबूला हो उठी दुष्ट जादूगरनी, महाबलियों का पीछा करने लगी। उसने जादू छोड़ा और लो, नाव पर घना कोहरा उतर आया—कहीं कुछ नज़र न आता था। लेकिन महाबली डरे नहीं। वायनेमेयनेन ने अपनी तलवार निकालकर कोहरा काट डाला। तब बूढ़ी जादूगरनी ने बड़ी भयानक लहरें नाव पर छोड़ीं। लेकिन महाबली उनसे भी बचकर निकल गये। तब लोउहा ने हवाओं को अपनी मदद के लिए बुलाया।

वे तूफान बनकर नाव पर टूट पड़ी। लेकिन यशस्वी *महाबली तूफान के सामने भी टिके रहे।*

दुष्ट चुड़ैल पोह्योला के सभी निवासियों को साथ लेकर अपने शत्रुओ से लड़ने चली। घमासान युद्ध हुआ। उसमे भी वह महाबलियों को मार नही पायी।

बस सामपो चक्की समुद्र मे गिर पडी और लहरो से टकराकर टूट गयी। लेकिन बूढ़े मनीषी वायनेमेयनेन ने उसके बचे-खुचे टुकडे जमा किये, एक मैदान पर उन्हे जोडा और कहा·

"कलेवल देश मे सुख-चैन हो!"

और तुरत ही खेतो मे हवा ने फसल बिगाडना, पाले ने कोमल अकुरो को मारना और घटाओ ने सूरज को छिपाना बद कर दिया।

उधर बुढ़िया ने इन वीरों से बडा ही भयानक बदला लेने की ठानी। *उसने उन पर ऐसी विपदा ढाने की सोची,* जिसे कोई नही झेल सकता।

उसने ऐसा मौका देखा जब वायनेमेयनेन जगल मे अपने गीत गा रहा था। इतनी अच्छी तरह वह गा
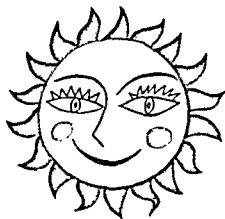
रहा था कि सूर्य और चद्रमा भी उसके गीत सुनने के *लिए नीचे उतर आये, चीड वृक्षो की टहनियो पर बैठ* गये।

दुष्ट बुढ़िया दबे पाव वहा पहुच गयी। झपटकर सूरज और चद्रमा को पकड लिया और लाकर अपने तहखाने मे बद कर दिया।

घुप्प अधेरा हो गया और ठड भी। सूर्य नही निकलता था। पृथ्वी को गरमाये कौन? पाले ने उसे जकड लिया। चद्रमा भी वनो-पर्वतो पर अपनी ज्योति नही फैलाता था।

कलेवल देश मे बडे बुरे दिन आ गये।

लोग ठड और अधेरे से परेशान रहने लगे।

बडा मुश्किल था सूर्य के बिना जीना। बहुत ही मुश्किल!

बुढ़िया ने महाबलियो से बदला तो ले लिया लेकिन फिर भी वह मन ही मन उनसे डरती थी।

बाज का भेस धरकर वह यह देखने उड चली कि ठड और अधकार मे महाबली क्या कर रहे है। मर-मरा गये है या अभी डर के मारे थर-थर काप रहे है?

वह वहा पहुची और देखा क्या उसने? देखा उसने यह कि इल्मारिनेन लोहार सही-सलामत है, अपने लो-हारखाने मे बैठा कुछ बना रहा है। "क्या कर रहे हो तुम?" वह पूछने लगी। इल्मारिनेन बोला· "मै इस दुष्ट बुढिया लोउहा के गले मे बाधने के लिए जजीर बना रहा हू, उसके गले मे जजीर डालकर उसे चट्टान से बाध दूगा।"

बुढिया समझ गयी कि वह महाबलियो का कुछ नही बिगाड सकती। ससार मे सबसे बलवान जो है—फिर अधकार और ठड—वह भी उन्हे नही मार सका। बुढिया उदास होकर पोह्योला को वापस लौट
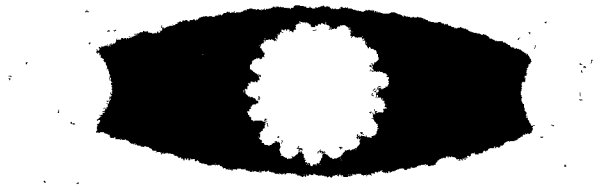
दिशा में भुकी होती है। यही मारी बात है।
हमने जो चित्र बनाया है उसमे धुरी दायी ओर
की भुकी हुई है। पृथ्वी मूर्य की परिक्रमा करती है और
ऐसा होता है कि पृथ्वी का उत्तरी गोलार्ध कभी मूर्य
की ओर भुका होता है, कभी उसमे परे।
जरा देखो कि जब उत्तरी गोलार्ध मूर्य की ओर
भुका होता है तब क्या होता है।
पृथ्वी धीरे-धीरे घूमती है। हम उस पर बैठे हैं।
जब प्रकाश और छाया की सीमा पर पहुचेंगे तो हम सूर्यो-
दय देखेंगे। चित्र मे इस स्थान पर हमने लिखा
है: "सुबह"।
फिर हम अपनी चक्कफेरी पृथ्वी पर मारा दिन
धूप मे रहेंगे। दोपहर को मूर्य हमारे सिर के प्राय: ऐन
ऊपर होगा।
और कुछ समय बीतने पर मूर्य अस्ताचल को जायेगा।
चित्र मे जहा "शाम" लिखा है, वहा पर जब हम
पहुचेंगे तब मूर्य क्षितिज के पीछे छिप जायेगा।
अब यह देखो कि रात कितनी छोटी होगी।

गर्मियो मे हम धूप मे कितना लबा रास्ता तय
करते है और कितना छोटा रास्ता छाया मे।
दिन चूकि इतना लबा होता है और रात इतनी
छोटी और चूकि सूरज सिर के ऐन ऊपर चमकता है,
इसीलिए गर्मी हो जाती है। ग्रीष्म ऋतु आती है।
पृथ्वी मूर्य की परिक्रमा करते हुए जब उसके दूसरी
ओर पहुचेगी तब बात बिल्कुल दूसरी होगी। यहा उत्तरी
गोलार्ध मूर्य की ओर नही उससे परे भुका होगा। पृथ्वी
के अपनी धुरी पर हर चक्कर मे हमें अधिक देर तक
छाया मे रहना पडेगा। पृथ्वी कुछ घटो के लिए ही हमे
धूप मे ले जायेगी और फिर से देर तक छाया मे रखेगी।
रात का हमारा पथ लबा हो जाता है, दिन का
छोटा। दिन मे सूरज की किरणे भी सीधे ऊपर से नही
पडती, जैसा कि गर्मियो मे होता है, बल्कि बगल मे
पडती हैं। किरणे धूमिल पड जाती है, वे पृथ्वी पर तिरछी
फिसलती है और उसे बहुत कम गरम करती है।
ठड हो जाती है। जाडा आ जाता है।
जो लोग भूमध्यरेखा के पास रहते हैं उन्हे कभी
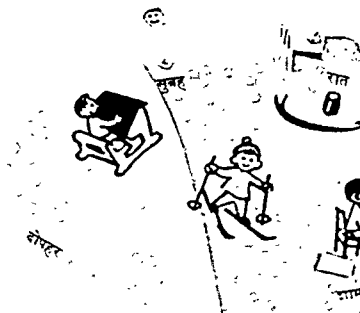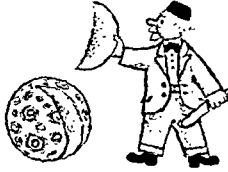
चंद्रमा फांक जैसा क्यों होता है?

सभी खगोलीय पिंड विशाल गोले हैं। इसीलिए सूरज हमें सदा गोल दीखता है।

लेकिन चंद्रमा तो कभी-कभार ही गोल होता है, अक्सर तो वह आधा-अधूरा, फांक जैसा ही नज़र आता है।

सड़क की बत्ती के दूधिया लट्टू को देखो। इसे तुम चाहे कहीं से भी देखो यह एक समान गोल होगा। क्योंकि यह बत्ती है। वह सूरज की तरह स्वयं प्रकाश देती है।

उधर फाटक के खंभे पर पत्थर का गोला बना हुआ है, वह अपने आप नहीं चमकता। उस पर सड़क की बत्ती की रोशनी पड़ रही है। यह रोशनी भी उस पर एक तरफ ही पड़ती है।

अब इस पत्थर के गोले को कमरे में से, प्रकाशित पर्दे के पीछे से देखो। गोले का अंधेरा पहलू अब बिल्कुल नहीं दीख पड़ता। उसका उजला पक्ष ही दिखायी देता है—संतरे की फांक जैसा गोले का एक हिस्सा ही।

ऐसा ही चंद्रमा के साथ होता है। वह भी तो

पत्थर का गोला है। सूरज वह बत्ती है, जो उसे एक ओर से प्रकाशित करती है। नीले आकाश से होकर सूरज का चकाचौंध करता प्रकाश और चद्रमा के अधूरे भाग पर पड़ता सूर्य का प्रकाश ही हमारी आंखों तक पहुंचता है। अंधकारमय भाग धुधली हवा के पार नही दिखायी देता है। तारे भी इसके पार नही दीख पडते हैं। हालांकि दिन मे भी सभी तारे अपनी जगह बने रहते हैं। उनको कोई बुझाता तो है नही।

रात को हवा छाया मे होती है। धूप उसे चमकाती नही। रात को हवा पारदर्शी हो जाती है, वैसे ही जैसे कमरे में बत्ती बुझी होने पर झीना पर्दा। तब उसके आर-पार सब कुछ दिखायी देता है। तारे हमें दिखने लगते हैं।

कभी-कभी रात को हवा खास तौर पर साफ और पारदर्शी होती है – न जरा-सी धूल, न कोई बादल। तब सबसे क्षीण, सबसे छोटे तारे भी देखे जा सकते हैं। ऐसी रातों मे चद्रमा का अंधेरा भाग भी नजर आता है।

चद्रमा कभी पूरा, कभी आधी रोटी जैसा तो कभी फाक जैसा क्यो होता है?

क्योकि वह पृथ्वी की परिक्रमा करता है।

जैसे कि यहां दिये गये चित्र में रस्सी से बंधा पिल्ला।

कभी पिल्ले की थूथनी पर अच्छी तरह रोशनी पडती है, कभी आधे चेहरे पर। फिर जब पिल्ला उस ओर चला जायेगा, जहा बत्ती है और रोशनी की ओर उसकी पीठ होगी तो उसकी सारी थूथनी अंधेरे मे होगी। उसे बिल्कुल भी नही देखा जा सकता। बस, एक पतली-सी किनारी ही दीख पडती है।

चंद्रमा पर क्या है?

अब तो हम यह जानते हैं कि चंद्रमा पत्थर का विशाल गोला है। पृथ्वी की परिक्रमा करता हुआ वह अतरिक्ष मे तिरता रहता है।

लेकिन पहले जब दूरबीनें और टेलीस्कोप नही थे तब लोग क्या सोचते थे? वे चद्रमा को निहारते थे, उस पर नज़रे गड़ाये उसे अच्छी तरह देख पाने की कोशिश करते थे और उनके मन मे तरह-तरह के विचार उठते रहते थे। वे यह पता लगाने की चेष्टा करते थे कि चद्रमा है क्या।

चद्रमा की रुपहली-नीली ज्योत्स्ना मे सब कुछ रहस्यमय प्रतीत होता है। पेड़-पौधो मे कोई हलचल नही, पानी पर झिलमिलाती पगडडी बन गयी है। पूर्ण नीरवता है!

चद्रमा रात्रि-लोक का राजा है।

उसके बारे मे लोगो ने बहुत-सी कहानिया बनायी है।

सोवियत सघ के दक्षिण मे रहनेवाले किर्गिज लोग उसके बारे मे यह कहानी सुनाते है।

बहुत पहले चद्र नाम का एक अमीर खान था। उसके एक सुदरी बेटी थी चदा।

देश-विदेश के कई बाके वीर सुदरी चदा से विवाह करने के इच्छुक थे। लेकिन खान की बेटी किसी की कुछ नही सुनना चाहती थी। क्योंकि उसे एक गरीब नाविक से प्रेम था। वह भी उससे प्रेम करता था।

पत्थर का गोला है। सूरज वह बत्ती है, जो उसे एक ओर से प्रकाशित करती है। नीले आकाश से होकर सूरज का चकाचौंध करता प्रकाश और चंद्रमा के अधूरे भाग पर पड़ता सूर्य का प्रकाश ही हमारी आंखों तक पहुंचता है। अंधकारमय भाग धुंधली हवा के पार नहीं दिखायी देता है। तारे भी इसके पार नहीं दीख पड़ते हैं। हालांकि दिन में भी सभी तारे अपनी जगह बने रहते हैं। उनको कोई बुझाता तो है नहीं।

रात को हवा छाया में होती है। धूप उसे चमकाती नहीं। रात को हवा पारदर्शी हो जाती है, वैसे ही जैसे कमरे में बत्ती बुझी होने पर झीना पर्दा। तब उसके आर-पार सब कुछ दिखायी देता है। तारे हमें दिखने लगते हैं।

कभी-कभी रात को हवा खास तौर पर साफ और पारदर्शी होती है — न ज़रा-सी धूल, न कोई बादल। तब सबसे क्षीण, सबसे छोटे तारे भी देखे जा सकते हैं। ऐसी रातों में चंद्रमा का अंधेरा भाग भी नज़र आता है।

चंद्रमा कभी पूरा, कभी आधी रोटी जैसा तो कभी फांक जैसा क्यों होता है?

क्योंकि वह पृथ्वी की परिक्रमा करता है।

जैसे कि यहां दिये गये चित्र में रस्सी से बंधा पिल्ला।

कभी पिल्ले की थूथनी पर अच्छी तरह रोशनी पड़ती है, कभी आधे चेहरे पर। फिर जब पिल्ला उस ओर चला जायेगा, जहां बत्ती है और रोशनी की ओर उसकी पीठ होगी तो उसकी सारी थूथनी अंधेरे में होगी। उसे बिल्कुल भी नहीं देखा जा सकता। बस, एक पतली-सी किनारी ही दीख पड़ती है।

चंद्रमा पर क्या है?

अब तो हम यह जानते हैं कि चद्रमा पत्थर का विशाल गोला है। पृथ्वी की परिक्रमा करता हुआ वह अतरिक्ष में तिरता रहता है।

लेकिन पहले जब दूरबीनें और टेलीस्कोप नही थे तब लोग क्या सोचते थे? वे चद्रमा को निहारते थे, उस पर नजरे गड़ाये उसे अच्छी तरह देख पाने की कोशिश करते थे और उनके मन मे तरह-तरह के विचार उठते रहते थे। वे यह पता लगाने की चेष्टा करते थे कि चद्रमा है क्या।

चद्रमा की रुपहली-नीली ज्योत्सना मे सब कुछ रहस्यमय प्रतीन होता है। पेड़-पौधो मे कोई हलचल नही, पानी पर झिलमिलाती पगडडी बन गयी है। पूर्ण नीरवता है!

चद्रमा रात्रि-लोक का राजा है। उसके बारे मे लोगो ने बहुत-सी कहानियां बनायी है। सोवियत सघ के दक्षिण मे रहनेवाले किर्गिज लोग यह कहानी सुनाते है।

बहुत पहले चद्र नाम का एक अमीर खान
उसके एक सुदरी बेटी थी चदा।

देश-विदेश के कई बाके वीर सुदरी चदा से
करने के इच्छुक थे। लेकिन खान की बेटी कि
कुछ नही सुनना चाहती थी। क्योंकि उसे एक
नाविक से प्रेम था। वह भी उससे प्रेम करना

लेकिन अमीर खान अपनी बेटी का विवाह किसी गरीब नाविक से कैसे करता, जिसे कोई नहीं जानता, जिसका कोई घर नहीं, नाम नहीं।

तब नौजवान ने फैसला किया कि वह परदेस जायेगा, वहां कोई पराक्रम करेगा, नाम कमाकर, यशस्वी वीर बनकर लौटेगा। तब खान अपनी बेटी का विवाह उससे करने से इन्कार करने का साहस नहीं कर पायेगा।

नाविक ने अपनी प्रिया से विदा ली और समुद्र पार चला गया। सुंदरी चंदा उसकी राह देखने लगी।

बहुत समय बीत गया, लेकिन उसका मनमीत नहीं लौटा। चंदा चिंतित रहने लगी। रात को वह सागर तट पर आकर खड़ी हो जाती, देखती रहती कि उसका मीत तो नहीं आ रहा।

लेकिन उसका कुछ पता ही नहीं था। कौन जाने उसे कुछ हो गया हो? चंदा रोती, उदास रहती।

बूढ़ा खान चल बसा। उसकी बेटी [illegible] संसार में अकेली रह गयी।

तब से वह रोज रात को अपना [illegible] [illegible] पहनती है, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] निकलती है। उदासी में डूबी दूर-दूर देखती रहती है।

इसीलिए चंद्रमा इतना पीला और उदास है।

एक दूसरी प्राचीन कहानी में चंद्रमा को जादुई रजत द्वीप बताया गया है, जो नीले आकाशीय महासागर में तिरता है। इस द्वीप पर विचित्र जीव रहते हैं, जो लोगों जैसे नहीं हैं।

वैसे किस्से-कहानियों में चंद्रमा जीता-जागता प्राणी ही अधिक होता है। वाकई चंद्रमा को देखो तो लगता है कि कोई मुस्कराता चेहरा तुम्हारी ओर देख रहा है। चंद्रमा के धब्बे मुंह, नाक, आंखों जैसे ही लगते हैं न।

किस्से-कहानियों में चंद्रमा सदा उदार, भला और कभी-कभी उदासी भरा होता है।

टेलीस्कोप से लोगों ने चंद्रमा का अच्छी तरह प्रेक्षण कर लिया, लेकिन वह उसे अधिक बारीकी से जानना चाहते थे।

सो लोग रॉकेटों की मदद से स्वचालित यान चंद्रमा पर भेजने लगे। ये यान अपनी कांच की आंखों से अपने इर्द-गिर्द सब कुछ देखते थे और दूरदर्शन की मदद से हमें दिखाते थे।

शुरू में ये यान अचल थे। जहां चंद्रमा पर उतरते वहीं बैठे रहते। बस अपना "सिर" ही इधर-उधर घुमाते। फिर वैज्ञानिक और इंजीनियर अधिक "अक्लमंद" यान चंद्रमा पर भेजने लगे। सोवियत संघ द्वारा भेजे गये यानों में कुछ ऐसे यान थे जो चंद्रमा पर उतरकर अपना फौलादी "हाथ" बाहर निकालते, उससे चंद्रमा की मिट्टी उठाते और अपने साथ लाये रॉकेट में उसे डाल देते। यह रॉकेट चंद्रमा से उड़ता और पृथ्वी पर लौट आता। इस तरह वैज्ञानिकों को घर बैठे-बैठे ही "चंद्रमा का टुकड़ा" मिल जाता। दूसरे सोवियत स्वचालित यानों पर पहिये और मशीनें लगे हुए थे। ऐसा यान 'लूनोखोद' कहलाता था। 'लूनोखोद' अपने चारों ओर का दृश्य देखता और दूरदर्शन द्वारा पृथ्वी पर लोगों को दिखाता कि इस समय वह कहां जा रहा है। पृथ्वी से लोग रेडियो द्वारा उसका संचालन करते थे और वह उनके आदेश पर [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] था। वैज्ञानिक और इंजीनियर पृथ्वी पर [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] और इंजीनियर [illegible] [illegible] [illegible] [illegible]

रखते। उन्हे लगता कि वे स्वयं चंद्रमा पर चल रहे हैं। वे 'लूनाखोद' को यह आदेश भी दे सकते थे कि वह रुककर मिट्टी को "हाथ" से छुए, देखे कि वह भुरभुरी है या सख्त, यह पता लगाये कि वह किन तत्वो से बनी है। यह सब अत्यत रोचक था, बहुत ही सुविधाजनक था और लोगो के लिए एकदम निरापद भी।

स्वचालित यत्रो ने लोगो को चद्रमा के बारे मे बहुत-सी नयी और महत्वपूर्ण जानकारी दी। लेकिन अमरीकियो ने अपने अतरिक्षनाविको को ही वहा भेजने का निश्चय किया। उन्होंने अपने लिए बड़ा कठिन कार्यभार तय किया था। कई साल तक वे तैयारिया करते रहे। उन्होने तीस-तीस मजिले मकान जितने ऊचे लगभग बीस राकेट बनाये। इनके ऊपर विशाल अंतरिक्षयान 'अपोलो' लगाये। पृथ्वी के गिर्द कई उडाने भरी। और फिर चंद्रमा की ओर उड चले।

१९६९ मे पहले मनुष्यों ने चद्रमा पर पांव रखा। यह थे अमरीकी अंतरिक्षनाविक नील आर्मस्ट्रांग और एडविन ओल्ड्रिन। चंद्रमा पर कुल बारह अमरीकी अंतरिक्षनाविक गये। इनमे अतिम तो चंद्रमा पर छोटी-छोटी "मोटरगाड़ियों" पर भी घूमे थे।

अमरीकी अंतरिक्षनाविक अपने साथ चंद्रमा के बहुत से पत्थर लाये और फ़ोटो भी खीचकर लाये। सबसे बडी बात उन्होंने चंद्रमा का "आखों देखा हाल" सुनाया। उनकी उडानों के बाद और सोवियत सघ के 'लूनाखोद' द्वारा वहा पर किये गये कामो के बाद अब हम चद्रमा पर अपनी यात्रा की कल्पना कर सकते हैं। तो चलो, उडान भरे।

दो दिन, दो रात की उड़ान के बाद हम चद्रमा पर पंहुच गये हैं।

हम चद्रमा पर हैं! अंतरिक्ष पोशाक पहनकर हम राकेट से बाहर निकलते हैं। इसके बिना नही निकल सकते – चंद्रमा पर हवा जो नही है, सास कैसे लेंगे। अतरिक्ष पोशाक के अदर हवा होती है।

चद्रमा पृथ्वी से छोटा है और वह कम शक्ति से वस्तुओं को अपनी ओर आकर्षित करता है। पृथ्वी की तुलना मे हर वस्तु का भार यहा पहले से छठा अंश रह जाता है। अपने साथी को तुम एक हाथ से ही उठा सकते हो, लगता है जैसे वह "खिलौना" है।

हम यहां इतने हल्के हो गये हैं कि आसानी से बड़े-बड़े गड्ढे फाद जाते हैं, एक छलांग में ही उछलकर चट्टान पर चढ जाते हैं। लगता है कोई अदृश्य शक्ति है, जो हमें सारा समय सहारा दिये रहती है।

यहा हम गिरते भी वैसे नही हैं, जैसे कि पृथ्वी पर। धीरे-धीरे नीचे आते हैं, जैसे कि पानी में डुबकी लगा रहे हो।

नील आर्मस्ट्राग ने बताया था कि यदि अचानक मुह के बल गिर पडो तो चोट नही लगेगी। और दोनों हाथों से चद्रमा की मिट्टी पर जरा-सा ज़ोर डालकर ही उठा जा सकता है।

उन्होंने यह भी बताया था कि यह हल्कापन कभी-कभी उनके लिए अड़चन भी बनता था।

हल्के आदमी के पाव मिट्टी से कम सटे होते हैं और वे ऐसे फिसलते हैं, जैसे पृथ्वी पर बर्फ पर। यदि तुम खडे हो और चलना चाहते हो तो शुरू में पाव "फसते" है। धीरे-धीरे छोटे-छोटे कदम भरते हुए चलना शुरू करना पडता है। फिर जब तुम चल रहे हो तो एकदम रुक नहीं सकते या तेज़ी से मुड़ नही सकते। पाव *फिसलते हैं – तुम आगे निकल जाते हो।* पहले से ही चाल धीमी करनी पडती है।

चद्रमा मे सदा पूर्ण निस्तब्धता होती है। तुम कितना भी क्यो न चिल्लाओ, तुम्हारी आवाज़ कोई नही सुन पायेगा। पृथ्वी पर ध्वनि वायु के माध्यम से फैलती है। चद्रमा पर वायु है ही नही। तुम्हारे सिर के ऊपर कोई घंटा बजाये तो भी तुम्हें कुछ नहीं सुनायी देगा, मानो घटा न बजा हो, रजाई पर डडा मारा हो। यहां रेडियो की मदद से ही या इशारो से ही एक दूसरे से बातचीत की जा सकती है।

आओ, अब यह देखें कि चारो ओर क्या है।

कहीं कोई पेड़ नही, कोई घास-पात नही। एकदम उजाड़ है। सतह ऊबड़-खाबड़ है, जैसे किसी ने चारो ओर ढेले-पत्थर फेककर बस ज़रा सपाट कर दिया हो और ऊपर से धूसर-मटमैली धूल की परत बिछा दी हो। धूल में से पत्थर निकले हुए हैं। पैरो तले देखकर न चलो तो ठोकर लग जायेगी।

चद्रमा पर गड्ढे ज्यादातर गोल ही है, जिनके सिरे जरा ऊपर को उठे हुए हैं। ये लड़ाई मे गोलो के फटने से बने गड्ढो जैसे ही लगते हैं। बडे गड्ढो को क्रेटर कहते हैं, ये तो टीलो की गोल भृखलाओं से घिरे विशाल खड्ड ही होते हैं।

बड़े क्रेटरो का तला गोल और सपाट होता है, इसलिए वे विशाल स्टेडियमो जैसे लगते है।

चद्रमा पर आकाश पृथ्वी के आकाश से बिल्कुल भिन्न है। वह आसमानी नही, काला है। रात हो या दिन आकाश एक-सा काला रहता है। हा, रात को उस पर तारे निकले होते हैं। वैसे तो दिन को भी तारे देखे जा सकते है, लेकिन तब जबकि सूर्य से ओट कर लो और धूप से भरे मैदान से भी।

सूर्य के अलावा काले आकाश मे पृथ्वी भी है। वह बहुत बडी है, नीले रग की। लगता है, उस पर सफेद-सा कुछ पुता हुआ है। यह पृथ्वी के बादल हैं।

एक दिलचस्प बात यह है कि आकाश पर सूर्य तो गतिमान है, किंतु पृथ्वी अचल है। ऐसा इसलिए प्रतीत होता है क्योकि चद्रमा का सदा एक ही पहलू पृथ्वी की ओर रहता है, जैसे हमारे चित्र मे रस्सी से बधा पिल्ला लड़की के गिर्द घूमता हुआ था। याद है न?

सूर्य का प्रकाश पृथ्वी के एक ओर ही पडता है। इसलिए पृथ्वी हसिये जैसी दिखायी देती है। आकाश मे *सूर्य पृथ्वी के जितना पास आता है, उतना ही यह हसिया* पतला होता जाता है। जब सूरज पृथ्वी के पास से गुजरता है, तो वह रुपहले छल्ले जैसी नजर आती है।

चद्रमा के आकाश मे सूरज बहुत धीरे-धीरे बढता है। यहा दिन दो हफ्ते का होता है।

इतने लबे दिन मे धूप से चद्रमा के पत्थर इतने तप जाते हैं कि ऊपर बर्तन रखकर खाना पकाया जा सकता है – आग जलाने की जरूरत ही नही। बडा अच्छा है न?

लेकिन जब रात आती है तो बस सभलके रहो। रात भी तो यहा दो हफ्ते की होती है। चारो ओर सभी चट्टाने बड़ी जल्दी ठडी पड जाती हैं। पाला तेज होता जाता है। कुछ दिनो मे तापमान शून्य से १५०° से० नीचे तक पहुच जाता है!

सूरज तो अभी जल्दी नही निकलेगा!

ऐसे "मौसम" मे तो घर पर आग के पास बैठना ही अच्छा है।

नही, चद्रमा पर जीना आरामदेह नही है।
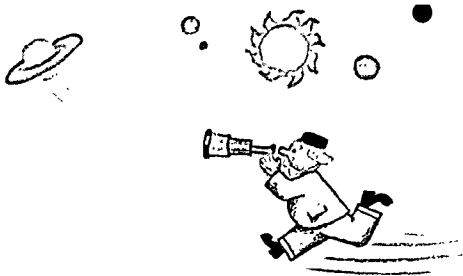
ग्रह क्या हैं?

शाम हो रही है। सूरज क्षितिज पर उतर आया है। हल्का-सा धुंधलका हो गया है। लेकिन आकाश पर अभी उजाला है, नीला और गुलाबी है वह।

सहसा तुम देखते हो आकाश पर सूर्य से कुछ बायीं ओर तथा ऊपर को एक रुपहला तारा चमकने लगा है। इसकी चमक बढ़ती जाती है। दूसरे तारे अभी नहीं निकले हैं। निकलने का अभी समय ही कहां हुआ है? अभी तो उजाला है। बस एक यही तारा बत्ती जैसा जल रहा है, टिमटिमा भी नहीं रहा।

जैसे ही सध्या का झुटपुटा होता है, यह तारा चमकने लगता है। धीरे-धीरे वह नीचे आता जाता है, जैसे कि क्षितिज के पार छिप गये सूर्य से पीछे छूट जाने का इसे डर हो। जब अंधेरा घिर आयेगा और सारे आकाश पर हजारों तारे छिटकेंगे तो यह सलोना तारा "पृथ्वी के छोर के पीछे" छिप जायेगा।

दूसरे दिन शाम को फिर यह चमकेगा।

इस तरह एक-दो महीने बीतेंगे। फिर यह तारा इतनी अच्छी तरह नहीं दिखायी देगा और धीरे-धीरे बिल्कुल ही ओझल हो जायेगा। कुछ समय बाद यह फिर से सुबह के समय प्रभातवेला की गुलाबी किरणों में चमकेगा। यह आकाश पर ऊपर उठेगा, जैसे कि सूर्य को रास्ता दिखा रहा हो। सूर्य शीघ्र ही निकलेगा। सभी तारे बुझ चुकेंगे, अकेला यही चमकता रहेगा। जब सूरज चढ़ेगा तभी यह अततः बुझेगा।

कौन है यह रुपहला सलोना? यह शेष सभी तारों से अधिक चमकीला क्यों है? यह कभी सूर्य के आगे और कभी उसके पीछे क्यों चलता है?

हजारों वर्षों से लोग इसे निहार रहे हैं, कभी इसे सांझ का तारा कहते हैं और कभी भोर का तारा।

भारत में इसका नाम शुक्र रखा गया। प्राचीन रोम में सौंदर्य की देवी के नाम पर इसे वीनस कहा गया।
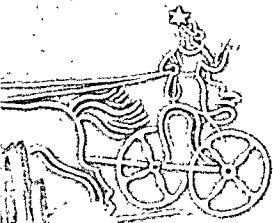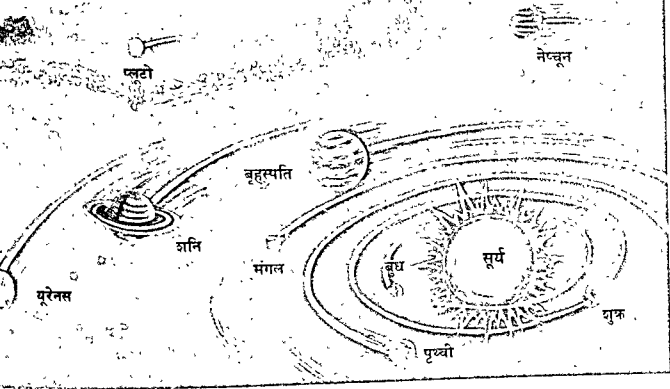
रोमवासियो की कल्पना मे यह एक अनुपम सुदरी थी, जो श्वेत अश्वो से जुते चादी के रथ मे सवार होकर आकाश पर भ्रमण करती थी।

वास्तव मे शुक्र क्या है?

शुक्र तारा नही, शुक्र एक ग्रह है।

सभी तारे नक्षत्रो मे सदा अपने स्थान पर रहते हैं, लेकिन कुछ तारे ऐसे हैं जो मथर गति से एक नक्षत्र से दूसरे की ओर भ्रमण करते रहते हैं। यदि तुम आस-पास के तारो को देखकर इनका स्थान याद कर लो और फिर कुछ दिनों बाद इन्हे ढूढो, तो तुरत ही देखोगे कि ये अपने उस स्थान से हट चुके हैं।

ऐसे "भ्रमणशील तारे" – ग्रह – लोग बिना किसी दूरबीन के पांच देख पाये थे। दूरबीन, टेलीस्कोप मे ये अधिक दिखायी देते हैं।

आओ, हम इनका परिचय पाये।

इसके लिए पहले हम अतरिक्ष मे दूर उड जायेंगे।

तो कल्पना करो कि विशाल राकेट पर बैठकर हम सूर्य से बहुत दूर उड़ गये हैं। इतनी दूर कि वहा से वह एक उज्ज्वल तारा ही लगता है।

हम देखते है कि यह तारा इससे भी दूर के तारो की पृष्ठभूमि मे अतरिक्ष मे गतिमान है।

अब हम सूर्य को अधिक गौर से देखते हैं। इसके निकट और भी कुछ छोटे-छोटे तारे हैं। वे सूर्य को घेरे हुए हैं और उसके साथ-साथ चलते हैं।

आओ, टेलीस्कोप देखे। पता चलता है कि ऐसा हर तारा चद्रमा की भाति एक "फाक" जैसा दीख पडता है। क्योकि ये सभी तारो की भाति अग्नि-पिड नही हैं, बल्कि अधेरे, ठोस गोले हैं, जो सूर्य के प्रकाश से चमकते हैं।

इनमे कुछ सूर्य के अधिक निकट हैं, कुछ दूर हैं। हमारी पृथ्वी भी इन मे है।

ग्रह अपने आप नहीं चमकते। वे केवल इसलिए चमकते हैं क्योकि सूर्य चमकता है। ये चद्रमा के जैसे हैं।

सूर्य की ज्योति न रहे तो सभी ग्रह भी तुरत बुझ जायेंगे।

आओ, अब यह देखे कि ग्रह कैसे चलते हैं। वे सभी सूर्य की परिक्रमा करते हैं। यहा, इतनी दूर से लगता है कि वे बहुत ही धीरे चल रहे हैं; ऐसा लगता है कि वे खड़े ही हैं। हमने यह चित्र बनाया है कि हर ग्रह साल भर मे कितना रास्ता तय करता है।

"फुर्तीला" बुध साल भर में सूर्य के गिर्द चार चक्कर लगा लेता है। शुक्र अधिक "धीर-गंभीर" है। वह केवल दो चक्कर लगाता है। पृथ्वी एक परिक्रमा करती है। "आलसी" मंगल केवल आधा चक्कर ही लगा पाया है, जबकि दूसरे ग्रह उससे भी कम।

कोई भी ग्रह कभी दूसरे से नही टकरायेगा। अंतरिक्ष मे हर किसी का अपना पथ है, जिसे कक्षा कहते हैं।

एक भी ग्रह कभी सूर्य को छोड़कर नही जायेगा। वे सदा-सदा के लिए सूर्य से बंधे हुए हैं। वे सब एक परिवार के सदस्य हैं। इस परिवार में आदर्श व्यवस्था है। परिवार का मुखिया सूर्य है, इसलिए इस परिवार को सौर मंडल कहते हैं।

आओ, अब ग्रहों के बीच लौट चलें। अपनी पृथ्वी पर उतरकर दूसरे ग्रहों को देखें। कुछ ग्रह पृथ्वी के अपेक्षाकृत निकट हैं, कुछ उनसे अधिक दूर। कुछ उसी ओर हैं जिधर सूर्य है, शेष विपरीत दिशा में।

लेकिन सभी बहुत दूर हैं। इसीलिए कोई भी ग्रह हमें आकाश मे चंद्रमा जैसा गोल नही दीखता। सभी चमकीले बिंदुओं जैसे नजर आते हैं। इसीलिए इन्हें गलती से तारे समझा जा सकता है।

पृथ्वी के अपेक्षाकृत निकट स्थित ग्रह—बुध, शुक्र, मंगल, बृहस्पति और शनि ही अधिक अच्छी तरह नजर आते हैं।

अच्छे बाइनोकुलर में शुक्र ग्रह चंद्रमा की भांति छोटे-से हंसिये जैसा लगता है। तब तुरंत ही यह आभास होता है कि यह सचमुच का तारा नहीं है बल्कि अंधेरा गोला है, जिस पर एक ओर से सूर्य का प्रकाश पड़ रहा है।

बुध ग्रह को देख पाना अधिक कठिन है। वह सूर्य के बहुत पास है। सूर्य का तेज प्रकाश उसे देख पाने में बाधक होता है। कभी-कभार ही जब सूरज डूब जाता है, तो साझ की गेरुई लाली में थोड़ी देर के लिए छोटे-से तारे—बुध को देखा जा सकता है। वह सूर्य से पीछे छूट जाने से डरता है। कभी-कभी बुध भी शुक्र की ही भांति सुबह नजर आता है। वह क्षितिज के पीछे से उसी स्थान पर निकलता है, जहा शीघ्र ही सूर्योदय होगा। थोड़ा ऊपर उठता है और आधे घंटे में ही प्रभात की किरणो में विलीन हो जाता है।

बुध में "गाभीर्य" कम है। सभी ग्रहों मे वह सबसे तेज, सबसे फुर्तीला है—कभी यहां होता है, कभी वहा, कभी नजर आता है कभी नही।

प्राचीन रोम मे बुध का नाम मरकरी रखा गया। रोमवासी कहते थे कि जिसे कहीं जल्दी-जल्दी पहुचना हो, वह मरकरी से कुछ सीखे। इसलिए सभी यात्री, सभी व्यापारी मरकरी को अपना गुरु, अपना देवता मानते थे। व्यापारियों को तो सदा अपना माल पहुंचाने की जल्दी रहती थी। जल्दी पहुंचा दोगे तो जल्दी बेच दोगे, जल्दी पैसे मिलेंगे। सो प्राचीन रोम मे व्यापारी भी मरकरी को अपना इष्ट देव मानने लगे।

मगल के रग से इसे तुरत ही पहचाना जा सकता है। सफेद-नीले तारों के बीच मंगल चमकीला नारंगी लगता है। मगल ग्रह का रग आग की लपटों जैसा है। इस लाल ग्रह को देखते हुए लोगों को अनचाहे ही यह याद आता था कि कैसे युद्ध के दिनों मे उनके घर जलते हैं।

लोग मगल ग्रह से डरते थे। वे यह सोचते थे कि लाल तारा आकाश पर निकला है तो इसका अर्थ है लड़ाई होगी, लड़ाई के साथ दूसरी विपदाएं भी आयेंगी।
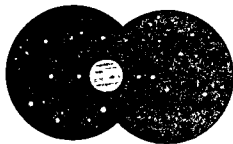
प्राचीन रोम के सेनापति मगल को, जिसे वे मार्स कहते थे, अपना सरक्षक मानते थे और उससे यह आस लगाते थे कि वह शत्रु पर विजय पाने मे उनकी सहायता करेगा।

मगल हर साल नही दिखायी देता। सूर्य की परिक्रमा की उसकी गति पृथ्वी से आधी ही है। इसलिए प्राय. ऐसा होता है कि पृथ्वी सूर्य के एक ओर होती है तथा मंगल दूसरी ओर।

ऐसा होने पर उसे नही देखा जा सकता। सूर्य की किरणे चकाचौंध करती हैं। क्या दिन मे नीले आकाश पर सूर्य के पास कोई तारा, चाहे वह कितना ही उज्ज्वल क्यो न हो, नजर आ सकता है? बिल्कुल नही। हा, मगल और पृथ्वी जब सूर्य के एक ही ओर होते हैं तो मगल रात को अच्छी तरह दीख पडता है। हर पद्रह-सतरह वर्ष बाद मगल पृथ्वी के बहुत निकट आ जाता है, तब वह खूब बडा और चमकीला लगता है।

मगल केवल रात को नजर आता है। उसे आकाश के उस भाग मे ढूढना चाहिए जहा से सूर्य दिन मे गुजरता है।

आकाश के उसी ओर रात को बृहस्पति भी देखा जा सकता है। वह अत्यत उज्ज्वल श्वेत तारा है। सभी सचमुच के तारों से वह इस बात मे भिन्न है कि सभी ग्रहो की भाति वह टिमटिमाता नही है, बल्कि बत्ती की तरह एकसार रोशनी देता है।

अच्छी दूरबीन से बृहस्पति को देखना बडा दिलचस्प होता है। तब उसके दोनो ओर एक कतार मे फैले चार बहुत ही छोटे-छोटे तारे दीख पडते हैं। इनकी स्थिति याद कर लो और फिर अगले दिन, या उसी दिन कुछ घटे बाद इन्हे देखो। तुम देखोगे कि इन तारो ने अपना स्थान बदल लिया है। एक तारा बृहस्पति के बायीं ओर था, अब वह दायों ओर है, दूसरा पास था, अब दूर हो गया है। ये बृहस्पति के उपग्रह हैं, उसके चाद हैं।

ये उसकी परिक्रमा करते है। हर बार जब तुम बृहस्पति को देखोगे तुम इन्हे नये स्थान पर पाओगे।

बृहस्पति के सबसे पास जो उपग्रह है वही सबसे तेज चलता है।

अपने चादो समेत बृहस्पति छोटे-से सौर मडल जैसा लगता है। इसलिए दूरबीन से बृहस्पति को देखते हुए तुम ग्रहो के हमारे "परिवार" की, जिसके केंद्र मे सूर्य स्थित है, अच्छी तरह कल्पना कर सकते हो।

शनि भी उज्ज्वल सफेद तारा है, किंतु उसकी काति बृहस्पति से कुछ क्षीण है। यह सबसे सुदर ग्रह है। ऐसा क्यो है, यह तुम ज़रा आगे चलकर देखोगे।

यदि सभी ग्रहो को जमा करके एक फुटे पर रखा जा सकता तो हम देखते कि वे सभी विभिन्न आकार के हैं। कुछ ग्रह पृथ्वी से छोटे हैं, कुछ उससे कही बडे।

सबसे छोटा ग्रह है बुध और सबसे बडा बृहस्पति। लेकिन बृहस्पति भी सूर्य से कही छोटा है। सूर्य तो इतना बड़ा है कि हमारे चित्र पर आ भी नही पाया।

तुलना के लिए हमने पास ही चद्रमा भी बनाया है। वह तो बुध से भी छोटा है।

सो, देखा तुमने—कैसे भिन्न-भिन्न हैं सभी ग्रह? तुम क्या सोचते हो, छोटे ग्रह पर रहे या बडे पर—सब बराबर है?

तुम क्या सोचते हो कि बडे ग्रह पर रहना अधिक अच्छा है—वहा जगह अधिक है? या छोटे ग्रह पर रहना अधिक अच्छा है—जल्दी से "सारी दुनिया" का चक्कर लगा सकते हैं?

सूर्य

जल्दी में कोई फैसला मत करो। सब कुछ इतना सरल नही है, जितना कि लगता है।

ग्रह जितना बड़ा होता है उतनी ही अधिक शक्ति से वह हर वस्तु को अपनी ओर आकर्षित करता है।
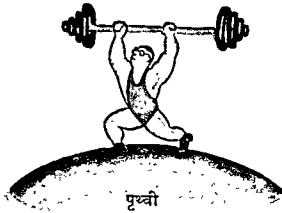
इसलिए वड़े ग्रह पर किसी भी वस्तु को उठाना कठिन है। वह अधिक भारी लगती है।

उदाहरण के लिए, बृहस्पति की यह आकर्षण शक्ति, जिसे गुरत्वाकर्षण कहते हैं, पृथ्वी से तीन गुनी अधिक है। बृहस्पति पर तो हमसे खड़ा ही न हुआ जा

सके। हमें ऐसा लगे कि हम मनों बोझ उठाये हुए हैं।

बेशक, ऐसे बोझ से घुटने मुड़ जायेंगे।

बृहस्पति का यह गुरुत्वाकर्षण सहन करने मे अकेले हम ही असमर्थ हों–ऐसी बात नहीं है। ईंटो का मकान भी बृहस्पति पर ढह जायेगा, क्योंकि मकान की नींव में लगी ईंटें चूरा हो जायेंगी। बृहस्पति पर पाच मंजिले मकान का भार पंद्रह मंजिले मकान जितना होगा।

बृहस्पति पर रेल की पटरियां इंजन के बोझ तले झुक जायेंगी, हवाई जहाज के पंख टूट जायेंगे, बस के टायर फट जायेंगे।

सो, देखा तुमने बड़े ग्रहों पर रहना कठिन है। वहा "फ़ौलादी" आदमी होने चाहिए, "कंकरीट" के पेड़, "पत्थर" के जानवर।

अच्छा, यदि ऐसी बात है तो हो सकता है छोटे ग्रहों पर आनंद से रहा जा सकता हो। छोटे ग्रहो का गुरुत्वाकर्षण कम होता है। वहा सभी वस्तुएं इतनी हल्की होती हैं, जैसे कि वे गुब्बारे पर लटकी हों। वहां चलना आसान है, तेज दौड़ सकते हैं, खूब ऊंचे उछल सकते हैं। याद है चंद्रमा की बात?

लेकिन एकदम खुश मत होओ।

छोटे ग्रह पर अगर लोगो का भार कम होता है तो पत्थरो और दूसरी सभी वस्तुओं का भार भी कम होता है। छोटा ग्रह जल और वायु को भी अपनी ओर कम शक्ति से आकर्षित करता है।

तुम यह नहीं भूले न कि पृथ्वी पर हवा "पुती" हुई है। तुमने कभी यह सोचा है कि यह हवा पृथ्वी पर क्यों बनी रहती है? मान लो तुम फ़ुटबाल की गेंद पर धुआं "पोत" दो तो यह धुआं तुरत ही इधर-उधर उड़ जायेगा। हवा भी तो धुएं जैसी है। वह भी उड़ जाना "चाहती" है। लेकिन वह पृथ्वी से उड क्यो नहीं जाती? सिर्फ इसलिए कि पृथ्वी अपने गुरुत्वाकर्षण बल से हवा को अपनी ओर खीचे रहती है। पृथ्वी का यह बल यदि कम हो जाये तो तुरंत ही हवा अंतरिक्ष में चारो दिशाओ मे उड जायेगी, जैसे कि धुआ उड़ जाता है।

सो छोटे ग्रहो पर हवा की बड़ी समस्या है। छोटे ग्रहों मे इतनी शक्ति नहीं कि वे हवा को अपने पास बनाये रखें। और हवा थोड़ी-थोड़ी करके उड़ जाती है।

यहां तक कि मंगल ग्रह पर भी पृथ्वी की अपेक्षा कही कम वायु रह गयी है। वहा यह अत्यंत विरल है।

बुध पर हवा प्रायः है ही नही। और चद्रमा पर तो तुम जानते हो कि हवा बिल्कुल नही है। वह बहुत पहले ही अपनी सारी वायु खो चुका है।

छोटे ग्रहो पर हवा की ही समस्या नही है। वहा जल की भी समस्या है। जल तो वाष्प बनकर उड़ता रहता है, सूखता रहता है। विशेषतः जब सूर्य उसे गरम करता है। जल वाष्प, कोहरा, बादल बन जाता है। कोहरा और बादल तो वैसे ही हैं जैसे हवा। उन्हे अच्छी तरह पकडकर न रखा जाये तो वे अंतरिक्ष मे उड़ जायेगे।

यही कारण है कि छोटे ग्रहो पर जल प्रायः नही है।

मगल पर बहुत थोडा-सा जल ही बचा है। चद्रमा बिल्कुल सूख चुका है। चद्रमा पर एक बूद भी जल नही है। यदि तुम चद्रमा पर बाल्टी भर पानी ले जाकर चद्रमा के पत्थरो पर उड़ेल दो तो यह डबरा भी बडी जल्दी सूख जायेगा, वाष्प बन जायेगा और यह वाष्प अंतरिक्ष मे उड़ जायेगी, उसमें विलुप्त हो जायेगी।

तो देखा तुमने कि किसी भी ग्रह पर रहना एक सी बात नही है। सबसे अच्छा पृथ्वी जैसे मझोले ग्रहो पर रहना ही है। मगल भी कुछ हद तक जीवन के लिए उपयुक्त हो सकता है।

हमने ताप की बात भी तो नही सोची। ग्रह तो एक घेरा बनाकर सूर्य की परिक्रमा नही करते न। सभी अपने-अपने घेरे मे घूमते हैं, कुछ सूर्य के अधिक पास हैं, कुछ दूर।

सूर्य ग्रहो को अपनी किरणों से ताप देता है। सूर्य के ताप के बिना नही जिया जा सकता। हर भट्ठी की भाति सूर्य का ताप भी उसके पास अधिक लगता है और उससे दूर कम।

यदि पृथ्वी सूर्य के पास चली जाये तो समुद्रों मे पानी खौलने लगेगा, पेड़ गर्मी के मारे जल उठेंगे।

दूसरी ओर यदि पृथ्वी सूर्य से दूर चली जाये तो इतनी ठड हो जायेगी कि नदियो-समुद्रो मे सारा जल जम जायेगा। सारी पृथ्वी पर बर्फ की मोटी तह जम जायेगी, जो गर्मियो मे भी नही पिघलेगी।

इसका मतलब है कि सभी ग्रहो पर "मौसम" अलग-अलग है। किसी ग्रह पर बेहद गर्मी है, तो किसी पर विभीषण ठड। उनके बीच मे कही न बहुत गर्मी होगी, न बहुत ठड।

हमारी पृथ्वी ही ऐसा ग्रह है जहा सर्दी-गर्मी दोनो "ठीक" ही हैं।

हमारे पडोसी ग्रह शुक्र पर भी भयानक गर्मी है। दूसरी ओर देखे तो मगल पर ही जैसे-तैसे रहा जा सकता है। वैसे तो वहा पर भी ठड ही है।

आओ, अब ग्रहो को पास से देखे।

टेलीस्कोप मे ग्रह प्रायः ऐसे ही दीखते हैं जैसे कि आकाश पर चद्रमा। उजला चक्र और उस पर काले धब्बे। ऐसा हर धब्बा उतना ही बडा है जितना कि पृथ्वी पर कोई देश। सबसे छोटा ग्रह बुध भी आखिर इतना बडा गोला है कि पैदल तो इसका चक्कर साल भर मे भी नही लगाया जा सकता।

वैज्ञानिक टेलीस्कोप मे देखते हैं और पाते है कि धब्बे का रूप बदल रहा है। इसका मतलब है कि यह बादल हैं, कि ग्रह वायु की परत से घिरा हुआ है और उसमे धूल, कोहरा, बादल उडते हैं।

यदि ग्रह पर ये धब्बे बरसो तक नही बदलते, जैसे हैं वैसे ही रहते हैं, तो यह बादल नही हैं। यह तो ग्रह की सतह पर ही कुछ है, या तो यह विशाल गहरा सागर है, या असीम घना वन, या काली चट्टाने।

वैज्ञानिक टेलीस्कोप मे देखना जारी रखते हैं। यदि ये काले धब्बे सागर है, तो जल कभी-कभार सूर्य की किरणो मे चमकना चाहिए। यदि धब्बा चमकता नही तो इसका अर्थ है कि यह शुष्क स्थल है, जैसे कि वन या पर्वत।

वैज्ञानिक टेलीस्कोप देखते ही नही। वे टेलीस्कोप की मदद से ग्रहो के फोटो भी खीचते हैं। टेलीस्कोप पर भाति-भाति के जटिल उपकरण लगाते हैं, जिनकी मदद से वे ग्रहो का तापमान मापते हैं, यह पता लगाते हैं कि उनकी वायु किन तत्वो से बनी है, ग्रह की सतह पर क्या है – रेत, पत्थर या वनस्पतिया।

इसलिए वैज्ञानिकों को अब ग्रहो के बारे मे बहुत कुछ पता है। सो हम ग्रहो की काल्पनिक यात्रा पर जा सकते हैं।

क्या बुध पर उतरा जा सकता है?

हा तो, हमारा अंतरिक्षयान बुध ग्रह के पास पहुच रहा है।

ऐसा लगता है कि बुध जरा भी घूम नही रहा है। अपनी एक "बगल" ही सूर्य की ओर किये उसकी परिक्रमा कर रहा है। लेकिन ऐसा केवल प्रतीत ही होता है। ग्रह के धब्बों को ध्यान से देखो। धीरे-धीरे वे धूप मे से छाया में जा रहे हैं। इसका अर्थ है कि यह कत्थई गोला घूम रहा है, बेशक बहुत धीरे-धीरे।

बुध सूर्य की परिक्रमा बड़ी तेजी से करता है—तीन महीने में ही परिक्रमा पूरी कर लेता है, लेकिन अपनी धुरी पर एक चक्कर लगाने मे उसे पूरे छह महीने लगते हैं।

जरा सोचो, बुध का एक दिन बुध के वर्ष से दुगना बड़ा है! इसका मतलब है कि बुध पर दिन में दो बार "नया साल" मनाया जा सकता है, जैसे कि सुबह और शाम को। यह मत भूलो कि यदि वहा सुबह तब हुई थी जब पृथ्वी पर जनवरी का महीना था, तो शाम अप्रैल में होगी।

अजीब ग्रह है!

हम यहां किस स्थान पर उतरें?

सूर्य यहा से बिल्कुल पास है। वह विराट लगता है, पृथ्वी से जितना बड़ा दीखता है, उससे तीन गुना अधिक बड़ा। धूप में असह्य गर्मी है। वह सब कुछ झुलसाये देती है। बुध पर जहां धूप पड़ती है वहां तापमान ४००° से० है! ऐसा गरम दिन तीन महीने चलता है! यहा तो अतरिक्षयान उतारने की सोचनी भी नही चाहिए। तुरन्त ही सब कुछ जल जायेगा। ऐसे तापमान मे कांच और सीसा तक पिघल जाते हैं।

बुध मे सारा जल कब का वाष्प बनकर उड चुका है और प्राय: सारी हवा भी अंतरिक्ष में उड़ गयी है। वहा केवल शुष्क पत्थर ही हैं। दिन में वे इतने तपे होते हैं कि उन पर पाव रखो तो जूते ही जल उठें।

उधर ग्रह के दूसरी ओर छाया मे रात्रि का काला अभेद्य अधकार होता है। विभीषण ठड। तापमान शून्य
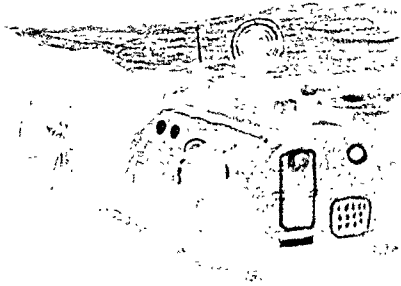
से नीचे १५०° से० तक या उससे भी अधिक नीचे चला जाता है। सूरज तीन महीने तक छिपा रहता है। बुध का अपना चांद भी नही है। प्रकृति ने उसे यह "रात की बत्ती" नही दी है। शुक्र ग्रह ही, जो बुध के आकाश मे हमारे आकाश की तुलना मे कही अधिक उज्ज्वल होता है, थोड़ी देर के लिए ठंडी चट्टानो पर अपना प्रकाश डालता है, और जब वह डूबता है तो फिर से पूर्ण अंधकार हो जाता है।

फिर भी इस ग्रह पर हम उतरने के लिए ऐसा स्थान ढूंढ सकते है जहां खतरा नही होगा। यही नही, अन्तरिक्षयान से बाहर निकलकर घूम भी सकते है। बेशक, अन्तरिक्ष पोशाक पहनकर ही।

यह तो हो नही सकता कि शाम को जब सूरज डूबता है तो दिन की झुलसाती गर्मी एकदम रात की कड़ाके की सर्दी बन जाये। धीरे-धीरे ही ठंड होती होगी। ऐसा कुछ समय होता होगा, जब तापमान १५-२५° सें० होता होगा, यानी वैसा जो हमे सुहावना लगता है।

तो धूप और छाया के संधि-स्थल पर हम अपना अन्तरिक्षयान उतारते है। उस सकरी पट्टी पर जहां अभी शाम है, जहां अब गर्मी नही रही और ठंड भी अभी नही हुई।

हम उतर गये और चारो ओर देखते है।

बुध चन्द्रमा जैसा ही है। वैसे ही नीरस, धूसर मैदान है यहां – ऊबड़-खाबड़ और पत्थरो से भरे। चारो

ओर वैसे ही खड्ड – क्रेटर हैं, टीलों से घिरे। बस आकाश यहां चद्रमा की तरह एकदम काला नही, बल्कि "काला-बैंगनी" है, क्योंकि बुध पर थोड़ी-सी हवा बची हुई है।

सूर्य इस समय ऐन क्षितिज के पास है। टीलो और चट्टानो से लंबी परछाइया पड़ रही हैं। छाया में पत्थर ठडे पडने लगे हैं। उन्हें छुआ जा सकता है। चट्टानों से सुखद गरमाहट उठ रही है।

लगभग बीस घंटे बीत जाते हैं। पृथ्वी के हिसाब मे प्राय पूरा एक दिन बीत गया, लेकिन यहा इतने समय मे सूरज क्षितिज के पीछे डूबा ही है, सो भी पूरा नही, उसका सिरा अभी भी चमक रहा है।

कुछ घटो मे यह "प्रकाश स्तम्भ" भी बुझ जायेगा। अभी तो आस-पास के पहाडो की चोटियों पर धूप है। फिर धीरे-धीरे वहा से भी चली जाती है। पूर्ण अंधकार छा जाता है। ठड तेजी से बढने लगती है।

डरो नहीं। बुध घूमते हुए हमें छाया मे ले गया है तो हम "वापस" भी तो चल सकते है और फिर से उजाले मे पहुच सकते हैं। या यह कहें कि धूप और छाया की सीमा पर। हम ऐसा भी कर सकते है कि चलते रहे और सारा समय धूप-छाव की इस पट्टी मे ही मौजूद रहे।

तो हम ऐसा ही करते हैं। हमारे पास गाड़ी है, जिस पर बैठकर हम "सूरज को पकड़ने" निकलते हैं।

बुध धीरे-धीरे घूमता है, सो हर दिन हमें इतना अधिक फासला नहीं तय करना होगा। छह महीने मे हम सारे ग्रह का चक्कर लगा लेंगे। इसके साथ ही न गर्मी से भुने जायेंगे और न ठड मे अकड़ेंगे। हम सदा ऐसी जगह पर रहेंगे, जहां सर्दी-गर्मी ठीक हा होती है। कमाल है न हम?

इस ग्रह की विचित्रताओं पर चकित मत होओ। इसकी कक्षा एक ओर को खिंची हुई है। सूर्य इसके केंद्र में नही है, बल्कि एक सिरे के अधिक निकट है। इस कक्षा पर चलते हुए बुध कभी सूर्य के पास आ जाता है और कभी उससे दूर चला जाता है। बुध से सूर्य को देखो, तो वह कभी "फूल" जाता है, अधिक ताप देता है और कभी "सिकुड़" जाता है और तब गर्मी कम हो जाती है।

इस "ठंडी ऋतु" मे बुध पर तापमान केवल २५०-३००° से० होता है।

सबसे दिलचस्प बात यह है कि इस "बेतुकी" कक्षा के कारण बुध के आकाश में सूर्य एक समान गति से नही चलता है। तीन महीने में एक बार उसकी गति धीमी हो जाती है, वह थम जाता है, थोड़ा पीछे को हटता है और थोडी देर रुका रहकर, मानो "ताकत बटोरकर" फिर से आगे बढ़ चलता है।

क्या अजूबा है! पृथ्वी पर ऐसा कभी नही होता।

लेकिन हमारे लिए ये "अजूबे" बड़े सुविधाजनक सिद्ध होते हैं। छह महीने की अपनी यात्रा मे हम दो बार आराम कर पाते हैं, एक स्थान पर दो-दो हफ्ते रह सकते हैं। हां, इसके बाद सूरज जब फिर से आकाश मे गतिमान होता है तो हमें दिन मे १५०-२०० किलोमीटर का फासला तय करना पड़ता है। लेकिन हमारे पास तो गाड़ी है, सो ऐसा करना कठिन नही।

तो लो, हमने पूरे ग्रह का चक्कर लगा लिया। सब कुछ देख लिया। खेद की बात है कि बुध पर कोई प्राणी नहीं है। पत्थर ही पत्थर है। चारों ओर एक जैसे-मौन और निश्चल। निष्प्राण जगत है यह। चद्रमा के ही जैसा।

शुक्र ग्रह पर हम क्या देखेंगे ?

आओ, अब हम शुक्र पर चले। सूर्य से यदि गिने तो यह सौर मंडल का दूसरा ग्रह है।

शुक्र ग्रह बुध से ज़रा भी नहीं मिलता। बुध पर नामालूम-सा, बहुत ही विरल वायुमंडल है, जिसमे कोई बादल नही। वहा पत्थर कभी धूप से झुलसते है तो कभी ठंड से चटखते है। वही कोई गति नही होती। पूर्ण निस्तब्धता है।

यहा सब कुछ इससे उलट है। शुक्र ग्रह के चारो ओर बहुत ही घना वायुमंडल है। उसमे इतने अधिक बादल है कि यह ग्रह सफेद रूई से लिपटा प्रतीत होता है — बिलकुल पूरी तरह, कही कोई "छेद" नही।

सदियो से खगोलविज्ञानी दिमाग लडाते आये थे: इस सफेद आवरण के तले क्या है?

सभी इस बात पर सहमत थे कि शुक्र पर खासी गर्मी होनी चाहिए, क्योंकि वह सूर्य के अधिक समीप है।

सभी यह समझते थे कि शुक्र पर सदा झुटपुटा रहता है। यदि वहां कोई जीव रहते है, तो उनके सिरो पर सदा बादल मडराते रहते है। उन्हे इस बात का ... नहीं होता कि नीला आकाश है, सूर्य है,

शेष बातो मे वैज्ञानिको के मत अलग-अलग थे। सभी अपने-अपने अनुमान लगाते थे।

कुछ वैज्ञानिको का कहना था शुक्र ग्रह सारा सारा एक महासागर है। वहा आकाश से अनवरत व होती रहती है। मतलब चारो ओर पानी ही पानी

कुछ का कहना था कि वहा पानी कब का चुका है, कि शुक्र ग्रह तपता शुष्क रेगिस्तान है।

कुछ अन्य वैज्ञानिक बीच की बात करते थे। कहना था कि वहां शायद वह सब है, जो पृथ्वी प सागर और मरुभूमि। पर्वत और वन। गर्मी के कार

घनी हरियाली है। वियाबान जंगलों में आश्चर्यजनक जानवर रहते हैं, काली घटाओं तले अद्भुत जीव उड़ते हैं।

किसका कहना सही है – यह जान पाने का कोई उपाय नही था। टेलीस्कोप मे सफेद "रूई का" गोला ही नजर आता था।

फिर रेडियोखगोलविज्ञानी इस काम मे शामिल हुए। उनके टेलीस्कोप खास तरह के होते है। उनमे देखना कुछ नही होता। वे अत्यत सवेदनशील रेडियो और विशाल प्लेट जैसा विशेष रडार लेते हैं। ऐसा रडार जिधर "देखता" है, उस ओर से आनेवाली रेडियो तरगें ही पकड़ता है।

रेडियोखगोलविज्ञानियो ने अपने रडार विभिन्न दिशाओं मे घुमाये। पता चला कि सभी तपे हुए पिंडो से रेडियो तरगे चारों ओर फैलती है। बेशक, ये तरगें कोई शब्द या सगीत नही लाती। यदि इन तरंगों को रेडियो पर सुना जाये तो बस सरसराहट ही सुनायी देगा। लेकिन यह सरसराहट भांति-भाति की होती है। कम तपे पिडों से एक तरह की, अधिक तपे पिडों से दूसरी तरह की। रेडियोखगोलविज्ञानी इस सरसराहट में भेद करना और उसकी मदद से दूर से ही वस्तुओ का तापमान जानना सीख गये हैं।

अब उन्होंने अपने रडार शुक्र ग्रह की ओर लक्षित किये। वहा से आती रेडियो तरगें पकड़ी और बताया – शुक्र के बादल ठंडे हैं, लेकिन उनके तले ठोस सतह है, जो लाल तपी हुई है।

दूसरे वैज्ञानिकों को इन बातो पर विश्वास नही हुआ। शुक्र पर भला बुध से अधिक गर्मी क्यो होगी, जबकि वह सूर्य से अधिक दूर है और उस पर बादल भी छाये रहते हैं?

यह पता लगाने के लिए कि आखिर वहा है क्या सोवियत वैज्ञानिको और इजीनियरों ने शक्तिशाली राकेटो की मदद से स्वचालित यंत्र शुक्र पर भेजने का निश्चय किया। इन्हें "अंतरग्रहीय स्वचालित स्टेशन" कहते हैं।

इन स्टेशनों को शुक्र तक पहुंचने में तीन महीने लगे! पहले दो स्टेशन शुक्र के पास से गुज़र गये। तीसरा शुक्र पर पहुंचा, पर उसने कोई सूचना नही भेजी। लेकिन इसके बाद के स्टेशनो ने अपना काम बखूबी पूरा किया। वह ग्रह के पास पहुंचे, उसके वायुमडल में घुसे, उनके पैराशूट खुले और वे धीरे-धीरे रहस्यमय बादलों में उतरने लगे। उतरते हुए वे रेडियो-सकेतो से यह सूचना भेजते रहे कि अपने उपकरणों से वे क्या "अनुभव कर" रहे हैं।

रेडियोखगोलविज्ञानियों की खुशी का कोई ठिकाना न रहा! उनकी बात सच निकली। स्टेशनो के उपकरणो ने यह दिखाया कि शुक्र के वायुमडल के तले पर तापमान ४७०° सें० है! बिल्कुल भट्ठी जैसी गर्मी।

उपकरणों ने और भी बहुत-सी रोचक जानकारी भेजी। हमें पता चला कि शुक्र ग्रह पर ऐसी गर्मी सदा रहती है – दिन हो या रात, जाड़ा हो या गर्मियां, कि शुक्र की वायु पृथ्वी की वायु से दसियों गुनी अधिक घनी है और वह बिल्कुल दूसरे तत्वों से बनी है। मनुष्य के लिए तो वह जहरीली ही है।

दो स्टेशनों ने तो शुक्र की तपी सतह पर उतरने के बाद अपने चारों ओर के दृश्य के फोटो खींचे और दूरदर्शन की मदद से हमें शुक्र का धरातल, उसके पत्थर दिखाये।

अब हम जीवन के लिए सर्वथा अनुपयुक्त इस ग्रह पर उतरने की तैयारी कर रहे हैं। पर हमारा अतरिक्ष-यान अग्निसह और मजबूत है। तो आओ, चलें!

हम "रूई के" विशाल गोले के पास पहुंचते हैं। उफ़, डर लगता है! कुछ दिखायी भी तो नहीं देता कि कहां उतर रहे हैं। हमारे नीचे बादल उमड़-घुमड़ रहे हैं। अच्छा हो, अगर नीचे मैदान हो। कहीं पहाड़ की नुकीली चोटी हुई तो? या कोई अथाह गर्त?

हमारा यान बादलों मे "डूबने" लगता है। चारों ओर सफेद ही सफेद बादल उमड़-घुमड़ रहे हैं। अंधेरा होने लगा है।

लो, बादल खत्म हो गये। अब वे हमारे सिरो के ऊपर पीली-पीली "छत" हैं। नीचे कई किलोमीटर की गहराई पर हल्की धुंध के पीछे काले और उजले धब्बे नजर आते हैं। यह शुक्र ग्रह का ठोस धरातल है!

एक धक्का-सा लगता है! हमारा यान एक ओर को झुक जाता है, चट्टान पर रगड़ खाता हुआ कहीं नीचे फिसलता है, फिर से धक्का लगता है और यान खड़ा हो जाता है।
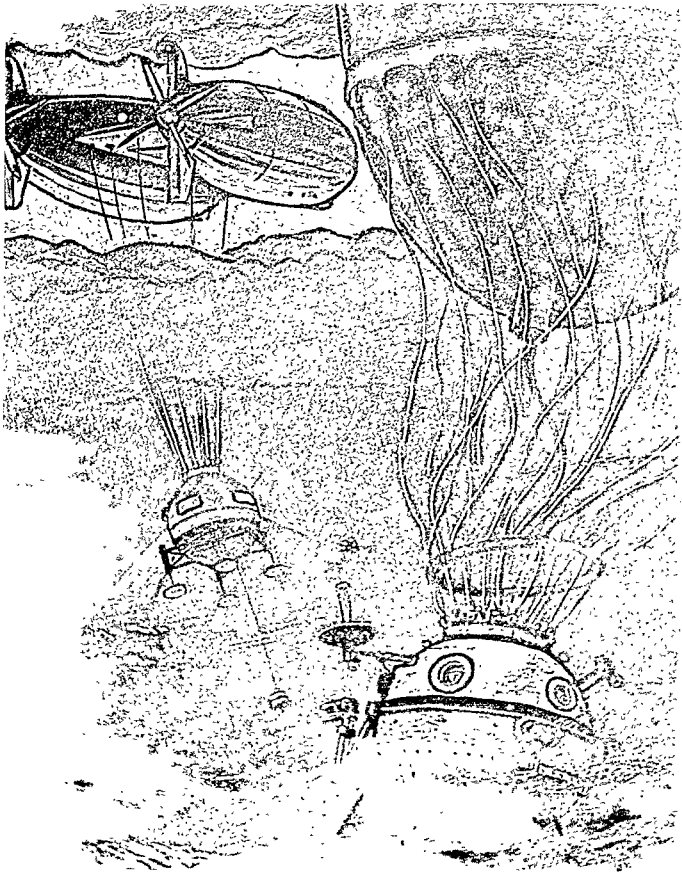
लगता है सब ठीक-ठाक है।

हम अग्निसह अंतरिक्ष पोशाक पहनकर बाहर निकलते हैं।

हा, शुरू मे तो बड़ा डरावना लगता है। कैसा मनहूस दृश्य है! चारो ओर एक ही जैसा, रंगहीन, पत्थरों भरा मैदान है। न कही पानी, न कहीं कोई झाड़ी, जीवन का कही कोई चिन्ह नही है। बस, निश्चल पत्थर ही पत्थर हैं। सिर के ऊपर गहरी सुरमई घटाओं की अभेद्य चादर तनी हुई लगती है। प्रकाश धूमिल है, कही कोई छाया नही। हवा धुंधली है, जैसे कि उसमे हल्का धुआ उड़ रहा हो। दूर के पत्थर इस धूसर धुंधलके मे विलय हो जाते हैं। क्षितिज दिखायी नही देता।

लेकिन यह चंद्रमा और बुध जैसा एकदम गतिहीन जगत नही है। ध्यान से देखा जाये तो पता चलेगा कि यहा कुछ हिल-डुल रहा है। हवा धीमे-धीमे चलती है। पृथ्वी की तरह तो नही। पृथ्वी पर तो हवा के झोंके आते हैं, उसकी दिशा बदलती रहती है। यहा ऐसा प्रतीत होता है कि तुम विशाल नदी के तले पर खड़े हो और यह नदी शात, मथर गति से बहती जा रही है। छोटे-छोटे कंकड़ इस "बहाव" मे अलसाये-से मुड़कते-पुड़कते हैं। धुंधलके मे कही-कही धीमे-धीमे चलती मटमैली धाराएं-सी दीख पड़ती हैं। यह शायद धूल है। यदि दूर नजर डाली जाये तो पत्थर डोलते प्रतीत होते हैं, जैसा पृथ्वी पर तब होता है जब अलाव मे उठती गर्म हवा के पार देखो। वायु की असाधारण सघनता का स्पष्ट आभास होता है। मिट्टी पर पाव रखने पर पावों तले से कीचड़-सा उठता है और वायु-धारा उसे धीरे-धीरे एक ओर ले जाती है, जैसे पृथ्वी पर जब तुम नदी मे गोता लगाते हो तो नदी के तले से कीच उठता है। खड़ा होना मुश्किल है। प्रवाह का जोर पड़ता है। लगता है जैसे कोई अपने हाथो से हौले-से, किंतु आग्रहपूर्वक तुम्हें धकेल रहा है। प्रवाह के साथ-साथ चलना आसान है। लेकिन प्रवाह के विपरीत चलना कठिन है, झुकना पड़ता है, पांव दबा-दबाकर रखना पड़ता है। हम जल्दी ही थक जाते हैं।

[illegible] सैंडल [illegible] तले [illegible] पैरों को गर्मी से नही बचा पाते।

हम पहला प्रयोग करते हैं—अपने साथ लायी शीशी में से सपाट पत्थर पर थोड़ा-सा पानी उड़ेलते हैं। जैसा गरम तवे पर पानी डालने पर होता है वैसे ही यह पानी भी छोटी-छोटी बूंदों में इधर-उधर फैल जाता है, ये बूंदें चटखती हैं, छींटे छोड़ती हैं और वाष्प बनकर उड जाती हैं। कुछ सेकंड में ही पत्थर फिर से सूख जाता है।

हमारे पास सीसे का एक टुकड़ा है। हम उसे पत्थर पर रखते हैं। धातु का स्लेटी टुकड़ा तुरत ही पिघलकर रुपहला द्रव बन जाता है।

हम एक गड्ढा खोदने की कोशिश करते हैं। बड़े पत्थर सब्बल से एक ओर को हटाते हैं, उनके तले जमी परत तोड़ते हैं। बेलचे से उसे एक ओर फेंकते हैं। मुश्किल से पथरीली जमीन मे आधा मीटर गहरा गड्ढा खोदते हैं। इसके तले पर सीसे का टुकड़ा फेंकते हैं, वह पिघलता नही। इसका मतलब है कि ग्रह के धरातल की एक पतली परत ही इतनी अधिक तपी हुई है। गहराई मे "ठंडक" है। वहां तापमान केवल ३००° सें० है।

अंतरिक्षयान से हमें निकले कुछ मिनट ही हुए हैं, तो भी हमें अपनी तापसह पोशाकों मे भी गर्मी लगने लगी है।

हम वापस अंतरिक्षयान मे घुसते हैं। जल्दी से ऊपर चलें!

हम बटन दबाते हैं। यान के ऊपर गोला-सा बनता है। यान धरातल से उठता है और ऊपर "तिरने" लगता है।

खिड़की के बाहर धीरे-धीरे उजाला होता जाता है। फिर अचानक केबिन मे सूर्य की चकाचौंध करती किरणें घुस आती हैं। जैसे पानी में से डाट बाहर निकलता है वैसे ही हमारा यान बादलों में से बाहर निकल आता है। चारों ओर फिर वही जाना-पहचाना नीलम, पारदर्शी, [illegible] अंतरिक्ष है! कितना अच्छा है!

ऐसा है शुक्र ग्रह! पर खैर, हम निराश नही होंगे।

पृथ्वी पर महासागर के तले पर भी तो [illegible] आसान नहीं है। वहां [illegible] ठंड होती है और अंधकार रहता है। लेकिन महासागर के [illegible] की कोई [illegible]

पर चलने को नही कहता। महासागर मे कुत्ते-बिल्लिया तो रहते नही, जिन्हे पावों तले ज़मीन चाहिए। महासागर में मछलिया रहती हैं। उनमे बहुतों को यह पता तक नही कि तला भी है। वे कभी तले पर नही जाती। वे जीवन भर तैरती रहती हैं और जल की सतह के पास ही जाती हैं।

शुक्र का वायुमडल कुछ हद तक हमारे महासागर जैसा ही है। हो सकता है उसमें भी सतह के पास तैरते हुए जीना सभव हो?

शुक्र के बादलो की ऊपरी सतह पर इतनी गर्मी नहीं है। वहा वायु प्राय इतनी ही घनी है जितनी कि पृथ्वी की सतह पर। बेशक, हम-तुम ऐसी हवा मे "तैर" नही सकते। हम नीचे गिर जायेगे। पक्षी पख फड़फड़ाते हुए टिके रहेगे, लेकिन उन्हे थोड़ा-बहुत आराम करने की भी जरूरत होती है। तब पक्षी कहा बैठेगे? छोटे-छोटे रोयेदार कीडे-मकोड़ों की बात और है। वे धूल के कणो की भाति ऐसी हवा मे उडते रह सकते है।

सो बहुत मुमकिन है कि शुक्र ग्रह पर बादलो के ऊपर ऐसे सूक्ष्म "रोयेदार जीव" रहते हो। उन्हे इससे कोई वास्ता ही नही कि नीचे प्रचंड गर्मी है। वे वहा जायेगे ही क्यो?

कहने का मतलब यह कि शुक्र ग्रह का अध्ययन करना चाहिए। लोग यहां आया करेगे, लेकिन वायुमडल के तले पर वे नही जायेगे। क्या जरूरत है इसकी? वे उडन-गुब्बारो पर बादलो के ऊपर उडते रहेंगे। विभिन्न अग्निसह उपकरण नीचे लटकायेगे, रेडियोलोकेटरो से शुक्र के धरातल को टटोलेगे। शायद वहा ऊंचे पहाड़ हो, जिनके शिखरो पर इतनी गर्मी न हो। हो सकता है, ध्रुवों पर भी गर्मी कम हो।

कुछ वैज्ञानिको ने अभी से यह मत प्रकट किया है कि शुक्र ग्रह को "ठीक-ठाक" किया, जीने लायक बनाया जा सकता है। उन्होंने यह सुझाव रखा है कि शुक्र के वायुमडल मे खास तरह के जीवाणु छोडे जाये। हवा मे तिरते हुए ये जल्दी ही बढ जायेगे, सारे ग्रह पर फैल जायेगे और कुछ वर्षों मे शुक्र की वायु की सरचना बदल देगे। वायुमडल को पारदर्शी बना देगे।

तब ग्रह की सतह धीरे-धीरे ठडी पड जायेगी। बादलो से वर्षा होगी। नदिया, झीलें, समुद्र बन जायेगे। नम मिट्टी पर लोग बीज बोयेगे। जगल उग आयेगे। वे हवा मे आक्सीजन भर देगे, उसे पशु-पक्षियो और मनुष्य के सास लेने योग्य बना देगे।

बड़ा आकर्षक विचार है न? ज़रा सोचो तो दूसरी पृथ्वी बनायेगे!

लेकिन अभी तो हम इसे कपोल-कल्पना ही मानेगे। फिलहाल। आगे देखी जायेगी। शुक्र ग्रह का कायाकल्प करने से पहले उसका अच्छी तरह अध्ययन करना चाहिए।

अमरीकी स्वचालित स्टेशन शुक्र की परिक्रमा करता रहा और रेडियोलोकेटर से उसने शुक्र की सतह टटोली। इस तरह यह पता चला कि वहा पहाड कहा हैं और मैदान कहा। ग्रह के मानचित्र बनाये गये हैं। सोवियत स्टेशन शुक्र ग्रह की उडाने भर रहे हैं। हर नया स्टेशन इस आश्चर्यजनक ग्रह के बारे मे नयी जानकारी भेजता है।

..अभी तो हम आगे चलते हैं। तीसरे ग्रह पर रुके बिना हम आगे बढते हैं। यह तो हमारी पृथ्वी ही है।

हाथ हिलाकर हम अपने मित्रों का अभिवादन करते हैं और चौथे ग्रह मगल की ओर उड चलते हैं।

क्या मंगल पर मंगलवासी हैं?

सो, हम मंगल ग्रह को जा रहे हैं। अभी तो वह दूर है और बालुई लाल रंग के छोटे-से गोले जैसा दीख पड़ता है।

कितना भिन्न है यह शुक्र ग्रह से! इस पर पतला-सा, पारदर्शी वायुमंडल है। यहां कोई बादल नहीं हैं। मंगल किसी तरह छिपा नहीं हुआ है और हम इसका विस्तार से प्रेक्षण कर सकते हैं।

इस पर एक ओर उज्ज्वल सफेद धब्बा है – टोपी जैसा। यह मंगल के दो ध्रुवों में से एक है। यह "टोपी" तभी नजर आती है जब मंगल पर जाड़ा होता है। गर्मियों में यह नहीं होती। कहीं यह हिम तो नहीं?

मंगल का ज्यादातर भाग उजला, लाल-सा है। इसकी पृष्ठभूमि में काले-काले-से धब्बे दिखायी देते हैं। लोगों ने पहली बार जब मंगल को टेलीस्कोप में देखा तो इन धब्बों को उन्होंने "समुद्र" कहा। वे सोचते थे कि ये भी वैसे ही समुद्र हैं, जैसे कि पृथ्वी पर हैं – जल से भरे। लेकिन जल तो धूप में चमकता। उधर मंगल पर कभी कुछ नहीं चमका। और लोग शीघ्र ही समझ गये कि ग्रह के काले भाग एकदम शुष्क हैं।

हां, उनका नाम "समुद्र" ही बना रहा।

अगर गौर से देखा जाये तो बड़े-बड़े काले धब्बों के अलावा मंगल ग्रह पर कभी-कभी कुछ विचित्र काली रेखाएं भी नजर आती हैं। ये सीधे तने धागों जैसी हैं और अलग-अलग दिशाओं में चली गयी हैं। ये रेखाएं वैसी ही लगती हैं जैसे कि घड़े पर पड़ी दरारें।

इन रहस्यमय धारियों को लोग "नहरें" कहने लगे। हालांकि लोग समझते थे कि यदि "समुद्र" शुष्क हैं तो "नहरें" पानी से भरी नहीं हो सकतीं। और फिर इनकी चौड़ाई भी दसियों किलोमीटर है।

लोगों का ध्यान इस बात की ओर गया कि मंगल के "समुद्रों" और "नहरों" का रंग जाड़ों में फीका पड़ जाता है। वसन्त में वे काले हो जाते हैं, मानो "जी उठते" हैं, कभी-कभी लगता है कि वे हरे हो गये हैं। पतझड़ में फिर लगता है कि उनका रंग फीका पड़ गया है।

ऐसा तो पृथ्वी पर वनों के साथ भी होता है! जाड़ों में पेड़ों पर पत्तियां नहीं होतीं और यदि इन दिनों ऊपर से मान लो हवाई जहाज से इन्हें देखा जाये तो लगता है कि वे फीके-धूसर हैं, पारदर्शी हैं। गर्मियों में पेड़ों पर हरी पत्तियां हैं तो वन का रंग गाढ़ा लगता है।

इसलिए बहुत से लोग यह मानने लगे कि मंगल

के काले धब्बे उसके वन हैं, और वे स्थान जहा वे उगते है नम घाटिया हैं।

इस बात पर विश्वास न करना कठिन था, मगल के वनो का रग भी तभी गाढ़ा होने लगता है जब ध्रुवीय हिम पिघलने लगता है। और शुरू मे ध्रुव के पास ही वन काले पड़ते है, फिर धीरे-धीरे यह सिलसिला आगे चलता है। लगता है जैसे हिम के पिघलने से बना जल ग्रह पर बह रहा है और जहा-जहा वह पहुंचता है वहा-वहा पेड़-पौधे जी उठते है।

लेकिन वह बहता कैसे है? क्या "नहरो" मे? ये "नहरे" इतनी सीधी क्यो हैं?

प्रकृति मे एकदम सीधी रेखाएं प्राय. नही पायी जाती। नदिया बल खाती चलती हैं। सागर तट कटे-छटे होते हैं। पहाड बिना किसी तरतीब के बने होते हैं।

लेकिन मनुष्य को सीधी रेखाए पसद है। वह सीधा बांध बनाता है—इस मे कम खर्चा आता है। जगल मे सीधा रास्ता बनाता है—वह अधिक सुविधाजनक है। मनुष्य बुद्धिसंपन्न जीव है और वही काम करता है, जो अधिक अच्छा, अधिक सुविधाजनक होता है।

सो, कुछ वैज्ञानिको ने यह निष्कर्ष निकाला कि मगल की "नहरे" बुद्धिसंपन्न मगलवासियो ने बनायी हैं। उनका कहना था कि मंगल पर जल की कमी है। उसके सारे विशाल उज्ज्वल धब्बे रेगिस्तान हैं। वहा न सागर हैं, न झीले और न नदियां। वहा वर्षा भी नही होती। लेकिन पानी के बिना तो जी नही सकते! सो, वसत मे जब ध्रुव पर हिम पिघलता है तो मगलवासी यह अमूल्य जल जमा करते हैं और किन्ही पाइपो से इसे गरम देशो को, अपने खेतो और नगरो को भेजते हैं।

पानी जल्दी-जल्दी पहुचे इसके लिए पाइप सीधे ले जाते हैं। इन पाइपो के पास-पास मगलवासियो के सिंचित खेत और बगीचे हैं। उनसे आगे रेगिस्तान है। सारे ग्रह के लिए पानी काफ़ी नही पड़ता।

पानी के पाइपों के आस-पास हरियाली के ये टुकडे ही हमे दूर से रहस्यमयी धारिया लगते हैं।

कितना सुंदर लगता है यह सब लोगो के सपनो मे! मगल के नगर! मगल के महल! मगल के फलते-फूलते बाग!

अब हम मगल के पास पहुच रहे हैं और हमारे सपने एक-एक करके टूटते जाते हैं।

मगल के सभी उजले स्थल तो, जैसा कि हमने सोचा ही था, रेतीले मैदान निकले। हा, कही-कही इनमे चद्रमा पर क्रेटरो जैसे गोल गड्ढे हैं। "समुद्र" तो बिल्कुल उलट ही निकले हैं। वे "वनो से भरी नम घाटिया" नही हैं। प्राय सभी "समुद्र" सूने पहाडी इलाके हैं।

अजीब बात है—यहा पास से "नहरे" भी नही दीख पडती। उनके स्थान पर पर्वत, क्रेटर और खड्ड ही है—वैसे ही जैसे चारो ओर हैं।

यह क्या बात है? पहाड हमे मैदानो से अधिक काले क्यो दीखते हैं? वसत मे और भी अधिक काले क्यो हो जाते है? वे "नहरे" कहा गयी जिनसे हमे बहुत-सी रोचक बाते जान पाने की आशा थी?

हम मगल के और भी निकट पहुचते हैं और उसके "रहस्य" एक-एक करके खुलने लगते हैं।

मगल पर रेत और धूल बहुत है। पृथ्वी की ही भाति उनका रग चट्टानो के रग से उजला है।

मगल ग्रह पर तेज हवाए चलती हैं। वे "ग्रह के सभी उभरे हुए भागो" से धूल उडा ले जाती हैं।

क्या मंगल पर मंगलवासी हैं?

सो, हम मगल ग्रह को जा रहे हैं। अभी तो वह दूर है और बालुई लाल रग के छोटे-से गोले जैसा दीख पड़ता है।

कितना भिन्न है यह शुक्र ग्रह से! इस पर पतला-सा, पारदर्शी वायुमडल है। यहा कोई बादल नही है। मंगल किसी तरह छिपा नही हुआ है और हम इसका विस्तार से प्रेक्षण कर सकते हैं।

इस पर एक ओर उज्ज्वल सफेद धब्बा है – टोपी जैसा। यह मगल के दो ध्रुवों मे से एक है। यह "टोपी" तभी नजर आती है जब मंगल पर जाडा होता है। गर्मियों में यह नही होती। कही यह हिम तो नही?

मगल का ज्यादातर भाग उजला, लाल-सा है। इसकी पृष्ठभूमि में काले-काले-से धब्बे दिखायी देते हैं। लोगों ने पहली बार जब मंगल को टेलीस्कोप से देखा तो इन धब्बो को उन्होंने "समुद्र" कहा। वे सोचते थे कि ये भी वैसे ही समुद्र हैं, जैसे कि पृथ्वी पर हैं – जल से भरे। लेकिन जल तो धूप मे चमकता। उधर मगल पर कभी कुछ नहीं चमका। और लोग शीघ्र ही समझ गये कि ग्रह के काले भाग एकदम शुष्क हैं।

हां, उनका नाम "समुद्र" ही बना रहा।

अगर गौर से देखा जाये तो बड़े-बड़े काले धब्बो के अलावा मगल ग्रह पर कभी-कभी कुछ विचित्र काली रेखाए भी नजर आती हैं। ये सीधे तने धागों जैसी हैं और अलग-अलग दिशाओं में चली गयी हैं। ये रेखाएं वैसी ही लगती हैं जैसे कि घड़े पर पडी दरारें।

इन रहस्यमय धारियों को लोग "नहरें" कहने लगे। हालांकि लोग समझते थे कि यदि "समुद्र" शुष्क हैं तो "नहरें" पानी से भरी नही हो सकतीं। और फिर इनकी चौड़ाई भी दसियों किलोमीटर है।

लोगों का ध्यान इस बात की ओर गया कि मंगल के "समुद्रो" और "नहरों" का रंग जाड़ों मे फीका पड़ जाता है। वसंत मे वे काले हो जाते हैं, मानो "जी उठते" हैं, कभी-कभी लगता है कि वे हरे हो गये हैं। पतझड़ में फिर लगता है कि उनका रंग फीका पड गया है।

ऐसा तो पृथ्वी पर वनों के साथ भी होता है! जाड़ों में पेड़ों पर पत्तियां नही होतीं और यदि इन दिनो ऊपर से मान लो हवाई जहाज से इन्हें देखा जाये तो लगता है कि वे फीके-धूसर हैं, पारदर्शी हैं। गर्मियों में पेड़ों पर हरी पत्तियां हैं तो वन का रंग गाढ़ा लगता है।

इसलिए बहुत से लोग यह मानने लगे कि मगल
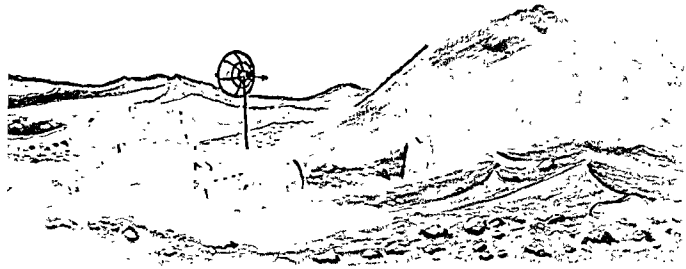
मगलवासियों की बनायी कोई चीज तो अभी तक हमे नहीं नज़र आयी है। लगता है ऐसा कुछ यहा पर है भी नही।

तो भी हमे लगता है कि मगल चद्रमा, बुध या शुक्र की भाति पूर्णत. जीवनरहित ग्रह नही है। वे तो एकदम शुष्क हैं, जैसे कि भट्टी मे तपा पत्थर।

और पानी के बिना किसी भी रूप मे जीवन का अस्तित्व नही हो सकता। उधर मगल ग्रह पर थोडी-सी नमी है ही।

कुछेक सोवियत और अमरीकी स्वचालित स्टेशन मगल तक गये हैं। वे इस ग्रह की परिक्रमा करते हुए अपने उपकरणो से इसका अध्ययन करते रहे, चारो ओर से इसके फोटो खीचते रहे।

और उन्होने बहुत सी दिलचस्प बातो का पता लगाया।

मगल के ध्रुवो पर जो "सफेद टोपिया" नज़र आती हैं वे मुख्यत "सूखी बर्फ" से बनी हैं। जमी हुई कार्बन डाइआक्साइड को ही सूखी बर्फ कहते हैं। लेकिन इसके अलावा जमा हुआ जल – हिम – भी है। यह वसत मे पिघलता है, वाष्पित होता है। इस जल-वाष्प को हवाए ग्रह के गरम भागो को ले जाती हैं और वहा रात को यह ठडी मिट्टी पर तुषार के रूप मे गिरती है। सुबह होने पर धूप मे यह तुषार पिघलता है और कुछ मिनटो के लिए मिट्टी गीली हो जाती है। वनस्पतियो और कीटो जैसे जीव इतने मे अपनी प्यास बुझा सकते हैं।

सबसे दिलचस्प बात यह है कि मगल का निकट से प्रेक्षण करते हुए स्वचालित स्टेशनो ने यहा सूख गयी नदियों के पाट देखे और उनके फोटो खीचे। क्या इसका अर्थ यह है कि कुछ समय पहले तक मगल पर जल-धाराए बहती थीं? तो फिर यह सारा जल कहां गया? शायद मिट्टी मे समा गया और वहा जम गया? मगल पर तो बहुत ठड है न।

लेकिन स्वचालित स्टेशनो ने उन "भट्टियो" का भी पता लगाया है, जो मिट्टी मे जमे जल को पिघला सकती हैं। उन्हें मंगल पर ज्वालामुखी मिले हैं। अब तो वे शात हैं, आग नहीं उगल रहे हैं, लेकिन इनके इर्द-गिर्द ग्रह के गर्भ से ताप उठता है।

सो जमी हुई मिट्टी पिघल सकती है। और यदि ज्वालामुखी का विस्फोट शुरू हो गया, उसमे से तपा हुआ लावा निकलने लगा तो चारो ओर सब कुछ गरम

दूसरे शब्दों में पहाड़ों से मैदानों में उड़ा ले जाती है। इसलिए पर्वतों पर कभी धूल नहीं होती, वे "साफ-सुथरे" होते हैं। इसीलिए काले दीखते हैं। पर्वतों की तलहटी में मैदानों पर सदा धूल और रेत बिछी रहती है। इसीलिए वे उजले दीखते हैं।

वसन्त में ध्रुव पर हिम पिघलता है। वहां से नम हवाएं चलती हैं। वे ग्रह को "पोंछती" हैं। इसके बाद पर्वत और भी अधिक "साफ-सुथरे" हो जाते हैं। बड़ी सीधी-सादी बात है। किन्हीं उद्यमों की जरूरत ही नहीं।

लेकिन "नहरों" का क्या हुआ? लगता है कि यह दृष्टिभ्रम ही है। गड्ढे, क्रेटर, पहाड़ और दूसरी ऊबड़-खाबड़ जगहें सतह पर एकदम बेतरतीब हैं। कहीं अधिक, कहीं कम। लेकिन कहीं पर तीन-चार क्रेटर संयोगवश एक लाइन में बन गये हैं। कहीं पर पर्वत शृंखला संयोगवश प्रायः सीधी रेखा में चली गयी है। कहीं ऐसा हुआ है कि रेतीले मैदान को चीरते एकदम सीधे गड्ढे चले गये हैं। ये सभी स्थान ही दूर से हमें सीधी धारियां लगते हैं।

क्या पता वे सचमुच हो ही?

खैर, जैसे भी वे हों, उन्हे हमारी पृथ्वी मे अवश्य रुचि होगी। अगर हमारी उनसे भेट हो गयी तो हम एक मगलवासी को अपने साथ ले आयेगे। उसे पृथ्वी दिखायेगे।

वैसे, वह बेचारा पृथ्वी पर गर्मी से बेहाल हो जायेगा। उसे खिड़कीवाले फ्रिज मे बिठाकर घुमाना होगा।

इस खिड़की मे से जब वह पृथ्वी पर समुद्र देखेगा तो शायद ईर्ष्या से रोने लगेगा। उसके लिए तो यह वैसे ही होगा, जैसे कि हम केक का बना पहाड़ देखें या मीठे दूध की नदी। मगल मे तो जल शायद अमूल्य वस्तु की तरह बोतलो मे बिकता होगा। हमारे यहा तो इसके सागर-महासागर हैं।

पृथ्वी के बादलो को तो हमारा मंगलवासी सारा-सारा दिन निहारता रहेगा। वहां पर तो ऐसा कुछ भी नही होता। हमारे बादल इतने सुंदर होते है, खास तौर पर सूर्योदय और सूर्यास्त के समय।

हम पहाडो की ओर चलते जा रहे हैं। बहुत देर तक चलते जाते हैं। पैर रेत मे धसते हैं।

पहाड़ो की ढलानो पर कुछ हरा-हरा रग दीखता है, जैसे कि चट्टानो पर काई उग आयी हो।

चट्टाने पास आ गयी है। दूर से हमे जो काई लगी थी, वह छोटे-छोटे पौधे हैं।

अरे, यह क्या! पौधो तले कुछ हिल-डुल रहा है! कोई हमारी ओर कूदा और फिर पौधो मे दुबक गया! अरे, ये तो बहुत हैं! इन्होने हमे देख लिया है! हमारी ओर आ रहे हैं

कौन हैं ये?

आगे हम तुम्हे कुछ नही बतायेगे। तुम जानते ही हो कि मगल ग्रह पर अभी तक कोई नही गया है। मगल पर जीवन के बारे मे तुम स्वय कल्पना करो। यही अधिक रोचक रहेगा। और जब बडे हो जाओगे तो मगल पर जाना और देखना कि तुमने जो कल्पना की थी वह कितनी सही है।

हो जायेगा। जल-धाराएं बहने लगेंगी।

इस सब का अर्थ यह है कि प्राणी यहां हवा में से भी और मिट्टी में से भी जल पा सकते हैं।

इसलिए हमें लगता है कि मंगल पर "कोई न कोई" होना चाहिए। लेकिन कौन?

बेशक, हम वहां मनुष्य जैसे प्राणियों के होने की उम्मीद नही कर सकते। लेकिन वनस्पतियां और छोटे-छोटे जीव तो हो ही सकते है।

वे इस ग्रह पर कहां रह सकते हैं? उन्हें कहां ढूंढे?

पृथ्वी पर प्राणी ग्रह की सतह पर रहते हैं। वहां उनके लिए जीना सुविधाजनक है—ताप भी और जल भी पर्याप्त है। लेकिन मंगल पर तो शायद मिट्टी में दुबककर ही रहना ठीक होगा। अगर सतह पर निकला भी जाये तो ज्वालामुखियों के क्रेटरो में ही, जहां इतनी ठंड नही और नमी भी अधिक है।

अब सबसे दिलचस्प बात देखो। मंगल के पर्वतों और मैदानो के ऊपर उड़ते हुए स्वचालित स्टेशनो ने कुछ रंगीन फोटो खीचे। इनमे कुछ क्रेटरो का तला हरा-हरा है। शायद यही मंगल पर जीवन है? शायद हम मंगल की किन्ही आश्चर्यजनक वनस्पतियो की हरियाली देख रहे हैं, जिसके बीच कोई अनजान जीव घूम-फिर रहे हैं?

१९७६ मे दो अमरीकी स्वचालित स्टेशन 'वाइकिंग-१' और 'वाइकिंग-२' मंगल ग्रह पर उतरे। उन्हे इस प्रश्न का निश्चित उत्तर पाना था कि मंगल ग्रह पर जीवन है कि नही।

'वाइकिंगो' ने अपने धातु के सिर इधर-उधर घुमाये और आस-पास के स्थल के बहुत अच्छे फोटो रेडियो तरंगो से पृथ्वी पर भेजे। इन मे हमने असीम रेतीले मैदान ही देखे, जिनमे रेत मे अधदबे पत्थर बिखरे हुए थे। फोटो पर जीवन के कोई चिन्ह नजर नहीं आते थे।

तब 'वाइकिंगों' ने अपने आस-पास थोड़ी मिट्टी खोदी, उसे "निगल" लिये और बड़ी देर तक अपने अंदर उसका अध्ययन करते रहे, यह ढूंढ़ते रहे कि कहीं उसमें कोई सूक्ष्म जीवाणु ही मिल जायें। पृथ्वी पर तो

जीवाणु सर्वत्र हैं, मरुभूमि की रेत में भी

'वाइकिंगो' ने पूरी ईमानदारी से ... यह सूचना भेजी: "लगता है कि मंगल प... नहीं है, लेकिन साथ ही मानो कुछ है भी।"

लो, समझते रहो, क्या मतलब है ... लोगों को अब तक यह नहीं पता कि मंग... है कि नहीं।

इसमें कोई शक नहीं कि वहां जीवन ... है। सो, पहले की ही भांति हम यह उम्मीद ... हैं कि देर-सबेर इसे खोज लेंगे।

तो लो, हम मंगल ग्रह के बिल्कुल ... गये हैं। एक सपाट जगह चुनकर वहां अपना ... हैं।

आकाश पर कही कोई बादल नहीं है। ... का रंग गाढ़ा बैंगनी है, जैसा बुध पर था। ... भांति यहां भी धूप से ओट कर लेने पर दिन ... देखे जा सकते हैं।

हम अपने इर्द-गिर्द नजर दौड़ाते हैं। ... क्षितिज तक बालुई टीले चले गये हैं। दूसरी ओर ... दूरी पर सुंदर पर्वत हैं।

हम पैदल इन पर्वतो की ओर चलते हैं।

बेशक, हमने अपनी अंतरिक्ष पोशाक पहन... है। सिलंडरों में भरी पृथ्वी की वायु से हम सा... हैं। यहां की वायु में ऐसे तत्व हैं कि यह हमारे ... लेने के काम नही आ सकती। और फिर हमारी ... इससे सौ गुनी अधिक सघन होती है।

इतनी विरल वायु मे कोई पक्षी और कीट... नही उड सकते। मंगल पर केवल रेंगा, दौड़ा और ... जा सकता है।

यदि मंगलवासी हैं तो वे पंखोंवाले कतई नहीं ...

मंगलवासियों की कल्पना लोगों ने किन किन ... मे नही की है!

कोई कहता था कि वे बिल्कुल छोटे-छोटे हैं ... चींटियों जैसे हैं।

कोई उनकी कल्पना अष्टभुजों के रूप में करता था। किसी का कहना था कि वे लोगों जैसे ही हैं ... बर्फीले।
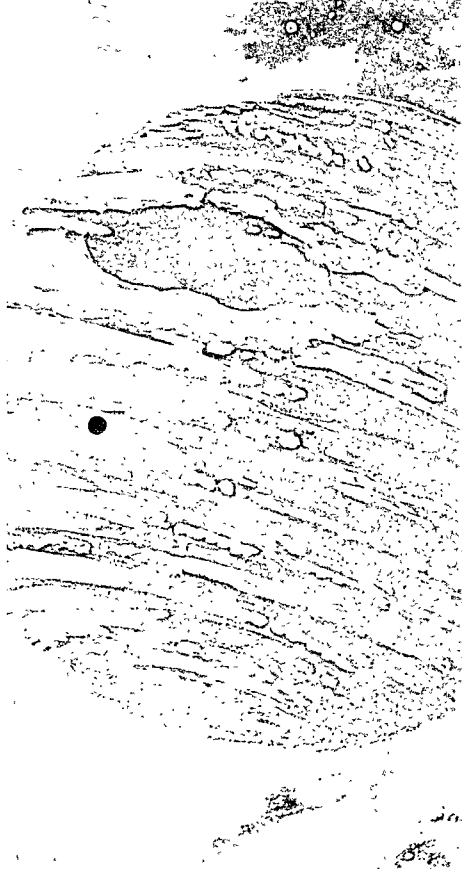
वृहस्पति और शनि कैसे हैं ?

बुध, शुक्र और मंगल पर हम उतर सके थे। वहां बहुत आरामदेह तो नहीं, लेकिन पैरों तले ठोस जमीन तो है, जिस पर खड़ा हुआ जा सकता है।

वृहस्पति और शनि पर उतर पाना असंभव है। ये ग्रह प्राय पूरे के पूरे बादलों से ही बने हुए हैं।

वृहस्पति जितना बड़ा लगता है उतना है नहीं। यह बादलों के विराट गोले के बीच में स्थित है, जैसे कि चेरी में गुठली। हम पृथ्वी से वृहस्पति ग्रह को नहीं, इस बादलों के गोले को देखते हैं और कहते हैं : "कितना बड़ा है वृहस्पति!" बड़ा तो बस उसका परिधान है।

लेकिन वृहस्पति के पूरे चौदह उपग्रह हैं, चौदह "चांद"। उनमें कई बहुत बड़े-बड़े भी हैं। दो तो हमारे चंद्रमा जितने बड़े हैं और दो बुध से भी छोटे नहीं हैं।

पृथ्वी से वृहस्पति के उपग्रहों को बारीकी से नहीं देखा जा सकता—बहुत दूर हैं वे। लेकिन अभी कुछ समय पहले अमरीकी स्वचालित स्टेशन 'पायोनियर' और 'वोयेजर' वृहस्पति और शनि ग्रहों के पास से उड़ते हुए निकले। उन्होंने इन ग्रहों और इनके उपग्रहों के पास से फ़ोटो खींचे।

वृहस्पति के सबसे बड़े उपग्रह बहुत रोचक निकले।

'इओ'—लपट के रंग का गोला है। यह सारा अंदर से बहुत गरम है। इस पर सारा समय ज्वालामुखी के विस्फोट होते रहते हैं।

'यूरोपा'—चमकीला, सफेद-सुनहरा उपग्रह है। यह बिल्कुल चिकना है, लेकिन दरारों से भरा।

'गेनिमीड'—सबसे बड़ा है। इस पर गहरी खरोंचें धारियां फैली हुई हैं। लगता है यह बर्फ से बना है, जिस पर काली पपड़ी चढ़ी हुई है और इसे जगह जगह किसी नुकीली चीज से खरोंचा गया है।

'कलिस्टो'—विलक्षण धब्बेदार उपग्रह है। इस पर कोई स्थान ऐसा नहीं है, जहां क्रेटर न हों।
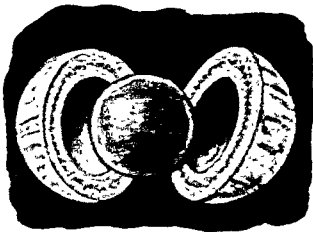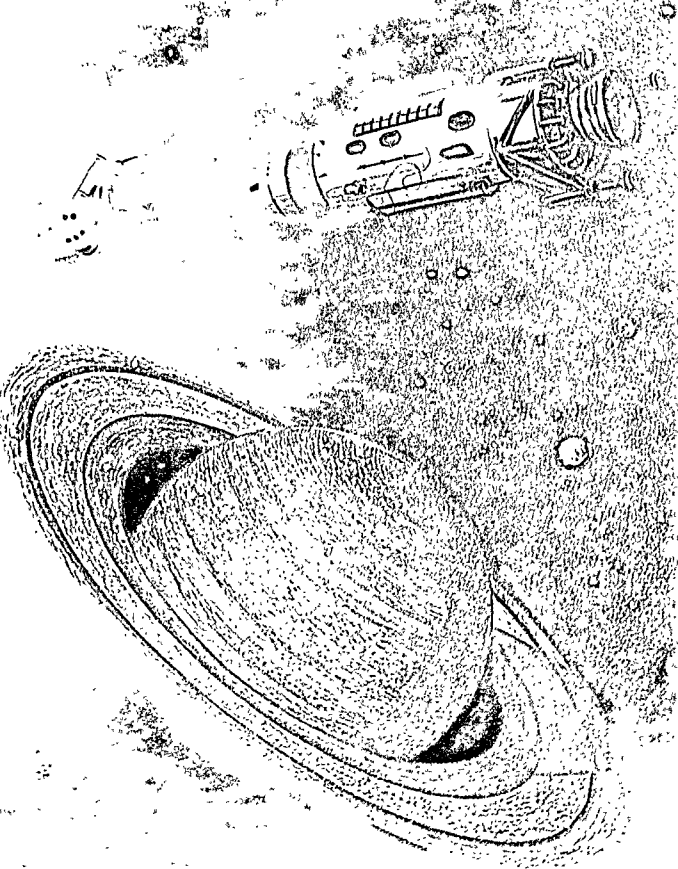
बृहस्पति को देखने के लिए हम इओ पर उतरते हैं। यही ग्रह के सबसे पास है।

बृहस्पति अपनी धुरी पर बड़ी तेजी से घूमता है। इसलिए इसके बादल इसकी मध्यरेखा पर धारियों जैसे फैले हुए हैं। जैसे तेज बहती नदी की सतह पर धाराएं।

बादलो की ये धाराए सदा एक दूसरी से आगे निकलती रहती हैं, उमडती-घुमड़ती हैं, रूप बदलती हैं।

एक स्थान पर बृहस्पति की सफेद धारियों के बीच विचित्र लाल धब्बा नजर आता है। लगता है कि जैसे नदी के तले मे कीच उठता है वैसे ही यहा गहराई से लाल धुआ उठता है। लाल सुर्ख घटा सफेद बादलों की धाराओं से ऊपर उठती है, उमडती है, कभी उज्ज्वल हो जाती है और कभी फीकी पड जाती है।

हो सकता है वहा बादलों तले विराट ज्वालामुखी का विस्फोट होता हो, कभी वह शात पड़ जाता हो, और कभी फिर नयी शक्ति से जाग उठता हो।

तुम्ही बडे होकर यह पहेली सुलझाओगे।

आओ, अब आगे चलें।

अगला ग्रह है शनि। यह बृहस्पति से बहुत मिलता-जुलता है। उसकी ही भांति बादलो के विराट आवरण के बीच वही ठोस पिंड है।

शनि के चारो ओर कुडली है जो इसकी शोभा न्यारी बनाती है।

यह मत सोचो कि यह कुंडली ठोस है, जैसे हैट की बाड़। नही, यह छोटे-छोटे टुकड़ो से बनी है, जो ग्रह की परिक्रमा करते हैं। हम अपने यान पर इस कुंडली में से वैसे ही गुज़र सकते हैं, जैसे आसमान से गिरते ओलों के बीच से। कुंडली की चौड़ाई लगभग २० किलो-मीटर है। हमारे यान को इस में से गुजरने मे एक मिनट भी नहीं लगेगा।

शनि सौर मडल का सबसे सुंदर ग्रह है।

शनि के भी उपग्रह हैं। इनमें एक है टाइटेनस। यह बुध जितना बड़ा है और वायुमडल से घिरा है। यह वायुमंडल पृथ्वी के वायुमंडल से मिलता-जुलता है। शायद यहा पर जीवन हो?

शेष ग्रह रोचक नही हैं। यूरेनस और नेप्चून बृहस्पति जैसे हैं। प्लूटो तो ठंडा वीरान ग्रह है। वह सूर्य से अत्यधिक दूर है। इतनी दूर कि सूर्य की एक परिक्रमा करने में इसे २५० साल लगते हैं। सूर्य वहा से एक चमकीला तारा ही लगता है और कोई ताप नहीं देता।

प्लूटो हमारे सौर मंडल का अंतिम ग्रह है।

प्लूटो के आगे तारो तक निर्वात है।

लेकिन हर तारा एक सूर्य है।

और शायद दूर के इन सूर्यों मे बहुतों के अपने ग्रह हों।

इन में कुछ शायद हमारी पृथ्वी जैसे हो। हो सकता है वहा लोग रहते हों—हमारे ही जैसे।

लेकिन यह सब तो बहुत ही दूर है।

हम अपने पास के ग्रहो को भी अभी अच्छी तरह नही जानते!
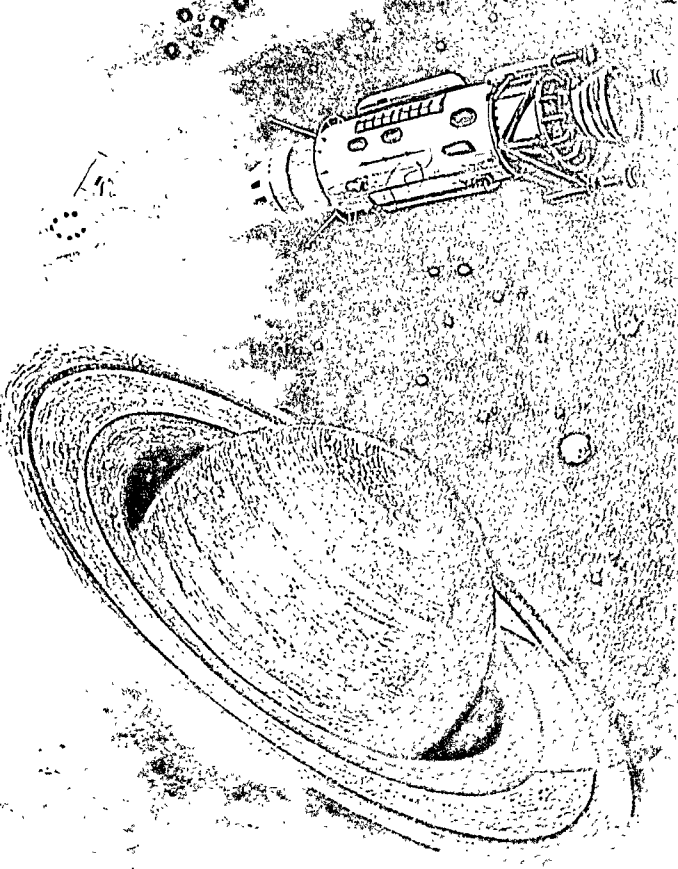
लोग ग्रहों के बारे में अधिक कब जानेंगे?

केवल टेलीस्कोप से ग्रहों को देखते हुए उनका अध्ययन करना बहुत मुश्किल था। लोगों की सदा यही कामना रही थी कि वे उन तक स्वयं पहुंच पायें। अपने हाथों से उन्हें टटोल सकें, अपनी आंखों से सब कुछ देख सकें, अपने कानों से सुन और अपनी नाक से सूंघ सकें।

कितना दिलचस्प होगा यह जानना कि दूसरे ग्रहों पर जीवन है या नहीं। किसी तरह की वनस्पतियां, कोई जीव हैं कि नहीं।

सबसे बड़ी कामना मनुष्य की यह रही है कि कहीं बुद्धिसम्पन्न जीव उसे मिलें। कैसे होंगे वे? हमारे जैसे? या नहीं?

ग्रह विराट, निस्सीम अन्तरिक्ष में द्वीप हैं। उनके बीच करोड़ों, अरबों किलोमीटर की दूरी है। एक ग्रह से दूसरे ग्रह पर कैसे पहुंचा जाये? कौनसा वाहन वहां ले जायेगा?

यह तो तुम जान ही गये हो कि न गुब्बारा और न हवाई जहाज इस काम आ सकते हैं। गुब्बारा हवा में उड़ता है। हवाई जहाज अपने पंखों से हवा पर टिका रहता है। वे उतनी ऊंचाई तक ही पहुंच सकते हैं, जहां काफ़ी घनी हवा है, वायुमंडल पर्याप्त सघन है। जहां वायुमंडल विरल हो जाता है, वहां इन पर नहीं उड़ा जा सकता।

वायुमंडल में तो ग्रहों के रास्ते का केवल आरंभ ही होता है। आगे का सारा रास्ता निर्वात में होता है। लेकिन निर्वात को तो वैसे ही लांघा जा सकता है, जैसे हम नाली कूदकर पार करते हैं।

बड़ी देर तक लोग यह नहीं समझ पा रहे थे कि ऐसी छलांग कैसे लगायी जाये। कैसे इतनी तेज़ दौड़कर उछला जाये कि दूसरे ग्रहों तक पहुंच जायें। रूसी वैज्ञानिक कोन्स्तान्तीन एदुआर्दोविच त्सिओल्कोव्स्की ने ही सबसे पहले यह बताया कि रॉकेट पर ही ऐसी छलांग लगायी जा सकती है।

रॉकेट में ईंधन का विशाल भंडार कुछ मिनटों में ही जल जाता है। कर्णभेदी गरज के साथ आग रॉकेट में से पीछे निकलती है और रॉकेट को आगे धकेलती है।

छोटा-सा रॉकेट भी हजार रेल इंजनों जितना शक्तिशाली होता है।

इस कल्पनातीत बल की ही बदौलत रॉकेट क्षणों में पृथ्वी से ऊपर उड़ जाता है और हर सेकंड में उसकी रफ़्तार बढ़ती है। कुछ मिनटों में ही वह [illegible] पार कर लेता है, वायुमंडल में से [illegible] है और वहां निर्वात में, [illegible] रफ़्तार पकड़ लेता है। [illegible]

५० गुना अधिक रफ़्तार से उड़ता है।

ऐसी कल्पनातीत गति से पृथ्वी के बधनो से मुक्त होकर राकेट "चुप" हो जाता है। उसने छलाग लगा दी है। अब वह अंतरिक्ष के निर्वात मे उडता जायेगा, वैसे ही जैसे खड्ड के पार फेंका गया पत्थर।

तुमने देखा होगा कि पत्थर सीधा नही जाता, बल्कि एक चाप बनाता है, पृथ्वी की ओर मुडता जाता है। अतरिक्ष मे राकेट भी सीधा नही उडता, बल्कि सूर्य की ओर मुडता जाता है। इसलिए राकेट को इस तरह छोडना चाहिए कि वह मुडते हुए आखिर वही पहुचे जहा हम उसे पहुचाना चाहते हैं। *यह मत भूलो कि जिस ग्रह पर उसे पहुचना है वह भी एक स्थान पर नही खडा है, बल्कि सूर्य की परिक्रमा कर रहा है।* इसका मतलब है, खाली स्थान को लक्ष्य बनाना चाहिए और ऐसा हिसाब करना चाहिए कि कुछ महीनो की उड़ान के बाद इस स्थान पर राकेट ग्रह से जा मिले।

बहुत ही जटिल काम है यह। लेकिन इसे भी लोगो ने सीख ही लिया है। अभी तीस साल भी नही हुए जब १९५७ में सोवियत अतरिक्ष अड्डे बाइकोनूर से पहला कृत्रिम भू-उपग्रह छोडा गया था। १९५९ मे मनुष्य ने दूसरे ग्रहो को लक्ष्य बनाया। उसने पहली बार चद्रमा को "छुआ" – सोवियत स्टेशन 'लूना-९' वहा उतरा। इसके बाद सोवियत और अमरीकी अतरग्रहीय स्टेशन एक के बाद एक छोडे गये हैं।

इन वर्षों मे वे चद्रमा, बुध, शुक्र, मगल, बृहस्पति, शनि के पास पहुंचे हैं। अपने सवेदनशील उपकरणो से उन्होंने इन ग्रहो का पास से अध्ययन किया है, इनके फोटो खीचे हैं, *रेडियो से अपने कार्य के परिणाम और* फोटो हमे भेजे हैं।

चद्रमा, शुक्र और मगल पर तो वे उतरे भी है, इनकी मिट्टी और वायुमडल की रचना का उन्होंने अध्ययन किया है, आस-पास के स्थान के फोटो खीचे हैं। जीवन के चिन्हो की खोज की है। चद्रमा की मिट्टी के नमूने पृथ्वी पर भेजे हैं।

इस सब का अर्थ यह नही है कि आज ही कोई भी व्यक्ति विशेष प्रशिक्षण पाये बिना राकेट में बैठ सकता है और किसी ग्रह पर, मान लो मगल पर, जा सकता है।

पृथ्वी – मंगल
पृथ्वी – चंद्र
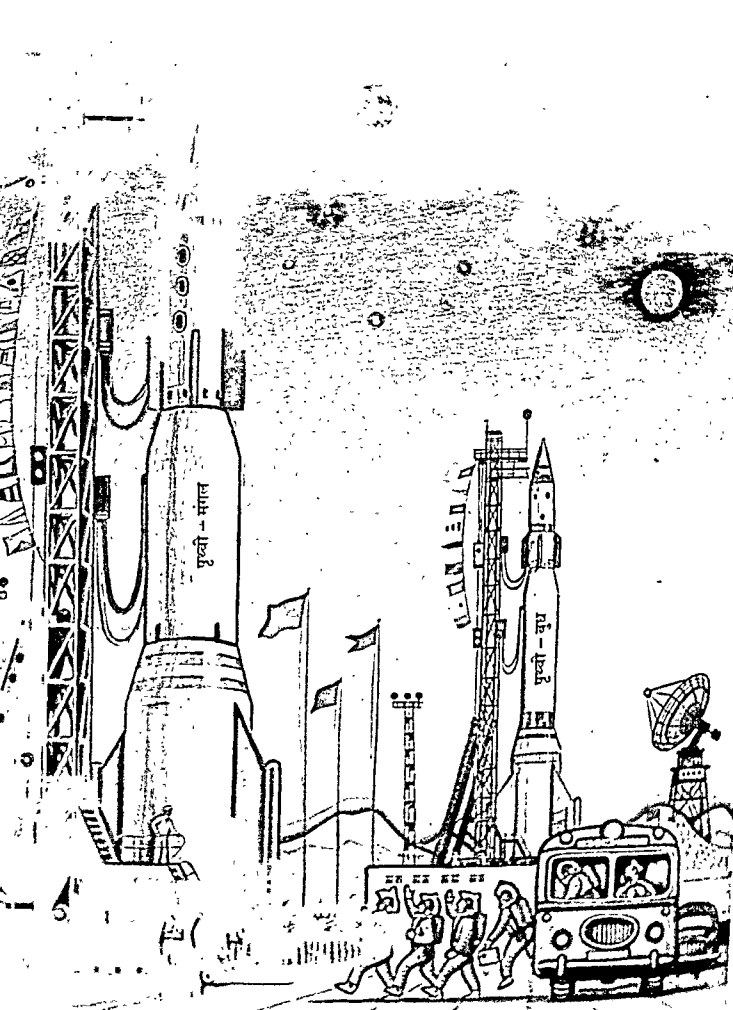
मनुष्य बडा कोमल प्राणी है। अंतरिक्ष मे उसे उतने ही *ध्यान से भेजना चाहिए, जैसे किसी अमूल्य* मछली को थल के रास्ते एक स्थान से दूसरे पर भेजा जाता है। मछली को पानी से भरे बर्तन मे ले जाया जाता है और इस बात का ध्यान रखा जाता है कि पानी बिखर न जाये, ज्यादा गरम न हो जाये, गदा न हो जाये। मछली को चारा देना भी याद रखना होता है।

अंतरिक्षयान मनुष्य के लिए "वायु से भरा बर्तन" है। इस "बर्तन" मे आदमी का मछली से भी अधिक ख्याल रखना होता है।

यही कारण है कि शुरू से ही लोग जो-जो काम स्वचालित यंत्र कर सकते हैं, वे सब उन्ही से कराने की कोशिश करते आये हैं।

अतरिक्ष की टोह लेने का काम भी स्वचालित यत्रो को सौंपा जाता है। जब स्वचालित यत्र टोह लेने का काम पूरा कर लेते हैं तो आवश्यकता होने पर आदमी भी जा सकता है।

१२ अप्रैल १९६१ को पहला मानव सोवियत अतरिक्षनाविक यूरी गगारिन अतरिक्ष मे गया।

२१ जुलाई १९६९ को पहले मानव ने चद्रमा पर पाव रखा।

अतरिक्ष मे यानों को एक दूसरे से जोडना सीख *लिया गया है। इसके बिना तो और आगे की अतरिक्ष* उडाने असभव हैं।

पृथ्वी की कक्षा मे सोवियत सघ के 'सल्यूत' और *अमरीका के 'स्काईलैब' अतरिक्ष स्टेशन काम करते रहे* हैं। 'सोयूज़-अपोलो' की सयुक्त उडान हुई है। सोवियत अतरिक्षीय समुच्चय 'सल्यूत-सोयूज़' अभी भी काम कर रहे हैं। इन पर अतरिक्षनाविक और कामो के अलावा दूर की उडानो की तकनीक तैयार करते हैं।

यह सब ग्रहो पर उडाने भरने की तैयारिया ही है।

निकट भविष्य मे भाति-भाति के नये-नये तथा अधिकाधिक जटिल अतरग्रहीय स्वचालित स्टेशन बुध, शुक्र, मगल, वृहस्पति ग्रहो की ओर जायेगे। वे टोह लेने का काम पूरा करेंगे। इसके बाद जब मनुष्य को पता चल जायेगा कि वहा क्या है, तब वह स्वय भी वहा जायेगा।

लेकिन हर ग्रह पर मनुष्य की पहली उडान के साथ उसके विस्तार से अध्ययन का काम शुरू ही होगा। हम अपनी पृथ्वी का ही अध्ययन हजारो वर्षों से कर रहे है और अभी तक पूरी तरह नही कर पाये हैं। तो फिर दूसरे ग्रहो की क्या कहे?

उनका अच्छी तरह अध्ययन करने मे बहुत समय लगेगा। वर्षो तक सैकडो अभियान दल, हज़ारो अनुसधानकर्ता वहा जायेंगे।

अगर तुम चाहो तो तुम भी उनमे होओगे।

मनुष्य की जिज्ञासा का कोई अत नही है! कितनी अच्छी बात है यह!

अनुक्रम